अपठित गद्यांश

पाठ 1

अपठित का अर्थ—'अ' का अर्थ है 'नहीं' और 'पठित' का अर्थ है—'पढ़ा हुआ' अर्थात् जो पढ़ा नहीं गया हो वह अपठित है। प्राय: शब्द का अर्थ उल्टा करने के लिए उसके आगे 'अ' उपसर्ग लगा देते हैं। यहाँ 'पठित' शब्द से 'अपठित' शब्द का निर्माण 'अ' लगने के कारण हुआ है।

'अपठित' की परिभाषा—गद्य एवं पद्य का वह अंश जो पहले कभी नहीं पढ़ा गया हो, 'अपठित' कहलाता है। दूसरे शब्दों में ऐसा उदाहरण जो पाठ्यक्रम में निर्धारित पुस्तकों से न लेकर किसी अन्य पुस्तक या भाषा-खण्ड से लिया गया हो, अपठित अंश माना जाता है।

'अपठित' का महत्त्व—प्राय: विद्यार्थी पाठ्यक्रम में निर्धारित गद्य व पद्य अंशों को तो हृदयंगम कर लेते हैं, किन्तु जब उन्हें पाठ्यक्रम के अलावा अन्य अंश पढ़ने को मिलते हैं या पढ़ने पड़ते हैं, तो उन्हें उन अंशों को समझने में परेशानी आती है। अतएव अपठित अंश के अध्ययन द्वारा विद्यार्थी सम्पूर्ण भाषा-अंशों के प्रति तो समझ विकसित करता ही है, साथ ही उसे नये-नये शब्दों को सीखने का भी अच्छा अवसर मिलता है। 'अपठित' अंश विद्यार्थियों में मौलिक लेखन की भी क्षमता उत्पन्न करता है।

निर्देश—अपठित अंशों पर तीन प्रकार के प्रश्न पूछे जाएँगे—

(क) विषय-वस्तु का बोध—इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देते समय निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए—

(i) प्रश्नों के उत्तर मूल-अवतरण में ही विद्यमान होते हैं, अतएव, उत्तर मूल-अवतरण में ही ढूँढ़ें, बाहर नहीं। प्राय: प्रश्नों के क्रम में ही मूल-अवतरण में उत्तर विद्यमान रहते हैं, अतएव प्रश्नों के क्रम में उत्तर खोजना सुविधाजनक होता है।

(ii) प्रश्नों के उत्तर में मूल-अवतरण के शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन भाषा-शैली अपनी ही होनी चाहिए।

(iii) प्रश्नों के उत्तर प्रसंग और प्रकरण के अनुकूल ही संक्षिप्त, स्पष्ट और सरल भाषा में देने चाहिए। प्रश्नों के उत्तर में अपनी ओर से कुछ भी नहीं जोड़ना चाहिए और न कोई उदाहरण आदि ही देना चाहिए।

(ख) शीर्षक का चुनाव—शीर्षक का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखें—

(i) शीर्षक अत्यन्त लघु एवं आकर्षक होना चाहिए।

(ii) शीर्षक अपठित अंश के मूल तथ्य पर आधारित होना चाहिए।

(iii) शीर्षक प्राय: अवतरण के प्रारम्भ या अंत में दिया रहता है, अत: इन अंशों को ध्यानपूर्वक पढ़ना चाहिए।

(iv) शीर्षक खोज लेने के बाद जाँच लें कि क्या शीर्षक अपठित में कही गयी बातों की ओर संकेत कर रहा है।

(ग) भाषिक संरचना—इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर के लिए व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है।

विशेष—पहले आप पूरे अवतरण को 2-3 बार पढ़कर उसके मर्म को समझने का प्रयास करें। तभी आप उक्त तीनों प्रकार के प्रश्नों के उत्तर सरलतापूर्वक दे पाएँगे। आपके अभ्यास के लिए कुछ अपठित अंश यहाँ दिए जा रहे हैं।

नीचे दिए गए गद्यांश को सावधानीपूर्वक पढ़िए तथा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(1)

देश-प्रेम क्या है? प्रेम ही तो है। इस प्रेम का आलम्बन क्या है? सारा देश अर्थात्, मनुष्य, पशु, पक्षी, नदी, नाले, वन-पर्वत सहित सारी भूमि। यह प्रेम किस प्रकार का है? यह साहचर्यगत प्रेम है, जिसके मध्य हम रहते हैं, जिन्हें बराबर आँखों से देखते हैं, जिनकी बातों बराबर सुनते हैं, जिनका और हमारा हर घड़ी का साथ रहता है, जिनके सान्निध्य का हमें अभ्यास हो जाता है, उनके प्रति लोभ या राग हो सकता है। देश-प्रेम यदि वास्तव में अन्त: करण का कोई भाव है तो यही हो सकता है।

प्रश्न—(क) उपर्युक्त गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) देश-प्रेम का आलम्बन क्या है?
(ग) लोभ या राग किसके प्रति उत्पन्न हो सकता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'देश-प्रेम'।
(ख) देश-प्रेम का आलम्बन सारा देश है। अर्थात्, पशु, पक्षी, नदी-नाले, वन-पर्वत सहित सम्पूर्ण भूमि देश प्रेम का आलम्बन है।
(ग) मनुष्य जिनके साथ हर समय रहता है, जिनको हर घड़ी देखता है और जिनकी बातें सुनता है, जिनके साहचर्य का उसे अभ्यास हो जाता है, उनके प्रति उसके मन में लोभ या राग उत्पन्न हो सकता है।

(2)

भारतवर्ष सदा कानून को धर्म के रूप में देखता आ रहा है। आज एकाएक कानून और धर्म में अंतर कर दिया गया है। धर्म को धोखा नहीं दिया जा सकता, कानून को दिया जा सकता है। यही कारण है कि जो लोग धर्मभीरू हैं, वे कानून की त्रुटियों से लाभ उठाने में संकोच नहीं करते। इस बात के पर्याप्त प्रमाण खोजे जा सकते हैं कि समाज के ऊपरी वर्ग में चाहे जो भी होता रहा हो, भीतर-भीतर भारतवर्ष अब भी यह अनुभव कर रहा है कि धर्म, कानून से बड़ी चीज है। अब भी सेवा, ईमानदारी, सच्चाई और अध्यात्मिकता के मूल्य बने हुए हैं। वे दब अवश्य गए हैं, लेकिन नष्ट नहीं हुए। आज भी वह मनुष्य से प्रेम करता है, महिलाओं का सम्मान करता है, झूठ और चोरी को गलत समझता है, दूसरों को पीड़ा पहुँचाने को पाप समझता है। हर आदमी अपने व्यक्तिगत जीवन में इस बात का अनुभव करता है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) धर्मभीरू किसका लाभ उठाते हैं?
(ग) भारतवर्ष के लोग धर्म की किन बातों को आज भी मानते हैं?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'धर्म और कानून'।
(ख) धर्मभीरू कानून की त्रुटियों का लाभ उठाते हैं।
(ग) मनुष्यों से प्रेम करना, महिलाओं का आदर करना, झूठ बोलने से बचना, चोरी न करना तथा दूसरों को न सताना आदि धार्मिक सदुपदेशों को लोग आज भी मानते हैं।

(3)

यदि मनुष्य और पशु के बीच कोई अंतर है तो केवल इतना कि मनुष्य के भीतर विवेक है और पशु विवेकहीन है। इसी विवेक के कारण मनुष्य को यह बोध रहता है कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। इसी विवेक के कारण मनुष्य यह समझ पाता है कि केवल खाने-पीने और सोने में ही जीवन का अर्थ और इति नहीं। केवल अपना पेट भरने से ही जगत के सभी कार्य संपन्न नहीं हो जाते और यदि मनुष्य का जन्म मिला है तो केवल इसी चीज का हिसाब रखने के लिए नहीं कि इस जगत ने उसे क्या दिया है और न ही यह सोचने के लिए कि यदि इस जगत ने उसे कुछ नहीं दिया तो वह इस संसार के भले के लिए कार्य क्यों

करे। मानवता का बोध कराने वाले इस गुण 'विवेक' की जननी का नाम 'शिक्षा' है। शिक्षा जिससे अनेक रूप समय के परिवर्तन के साथ इस जगत में बदलते रहते हैं, वह जहाँ कहीं भी विद्यमान रही है सदैव अपना कार्य करती रही है। यह शिक्षा ही है जिसकी धुरी पर यह संसार चलायमान है। विवेक से लेकर विज्ञान और ज्ञान की जन्मदात्री शिक्षा ही तो है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) मनुष्य और पशु में क्या अन्तर है?

(ग) विवेक कर्तव्य-निर्धारण में किस प्रकार सहायता होता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'शिक्षा और विवेक'।

(ख) मनुष्य विवेकशील प्राणी है। किन्तु पशु विवेक हीन होता है।

(ग) विवेक के कारण मनुष्य यह समझ पाता है कि क्या अच्छा है तथा क्या बुरा है। विवेक के कारण मनुष्य अपना कर्तव्य निर्धारित कर पाता है तथा निस्वार्थ भाव से संसार की सेवा करने में समर्थ होता है।

(4)

भोजन का असली स्वाद उसी को मिलता है जो कुछ दिन बिना खाए भी रह सकता है। 'जीवन का भोग त्याग के साथ करो।' यह केवल परमार्थ का ही उपदेश नहीं है क्योंकि संयम से भोग करने पर जीवन में जो आनंद प्राप्त होता है, वह निरा भोगी बनकर भोगने से नहीं मिलता है। अकबर ने तेरह साल की उम्र में अपने बाप के दुश्मन को परास्त कर दिया था जिसका कारण था अकबर का जन्म रेगिस्तान में होना और उसके पिता के पास एक कस्तूरी को छोड़कर और कोई दौलत नहीं थी। महाभारत के अधिकांश वीर कौरवों के पक्ष में थे, मगर जीत पांडवों की हुई, क्योंकि उन्होंने लाक्षागृह जैसी मुसीबत झेली थी। उन्होंने वनवास के जोखिम को पार किया था। श्री विंस्टन चर्चिल ने कहा है कि जिंदगी की सबसे बड़ी सिफत हिम्मत है। आदमी के और सारे गुण उसके हिम्मती होने से ही पैदा होते हैं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) भोजन का असली स्वाद किसको मिलता है?

(ग) 'जीवन का भोग त्याग के साथ करो'—कथन का आशय स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'साहस और संघर्षपूर्ण जीवन।'

(ख) भोजन का असली स्वाद उस व्यक्ति को मिलता है जो कुछ दिन भूखा रह सकता है।

(ग) जीवन में भोग से सुख तभी मिल सकता है जब मनुष्य त्याग के मार्ग पर चले। संसार जो कुछ है उसका अल्प अंश ग्रहण करके शेष दूसरों के लिए छोड़ देना आवश्यक है।

(5)

अहिंसा और कायरता कभी साथ नहीं चलती। मैं पूरी तरह शस्त्र-सज्जित मनुष्य के हृदय में कायर होने की कल्पना कर सकता हूँ। हथियार रखना कायरता नहीं तो डर का होना तो प्रकट करता ही है, परन्तु सच्ची में अहिंसा शुद्ध निर्भयता के बिना असम्भव है।

क्या मुझमें बहादुरों की वह अहिंसा है? केवल मेरी मृत्यु ही इसे बताएगी। अगर कोई मेरी हत्या करे और मैं मुँह से हत्यारे के लिए प्रार्थना करते हुए तथा ईश्वर का नाम जपते हुए और हृदय मन्दिर में उसकी जीती-जागती उपस्थिति का भान रखते हुए मरूँ तो ही कहा जाएगा कि मुझमें बहादुरों की अहिंसा थी। मेरी सारी शक्तियों के क्षीण हो जाने से अपंग बनकर मैं एक हारे हुए आदमी के रूप में नहीं मरना चाहता। किसी हत्यारे की गोली भले मेरे जीवन का अन्त कर दे, मैं उसका स्वागत करूँगा। लेकिन सबसे ज्यादा तो मैं अन्तिम श्वास तक अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए ही मरना पसन्द करूँगा।

मुझे शहीद होने की तमन्ना नहीं है। लेकिन अगर धर्म की रक्षा का उच्चतम कर्त्तव्य पालन करते हुए मुझे शहादत मिल जाए तो मैं उसका पात्र माना जाऊँगा। भूतकाल में मेरे प्राण लेने के लिए मुझ पर अनेक बार आक्रमण किए गए हैं; परन्तु आज तक भगवान ने मेरी रक्षा की है और प्राण लेने का प्रयत्न करने वाले अपने किए पर पछताए हैं। लेकिन अगर कोई आदमी यह

मानकर मुझ पर गोली चलाए कि वह एक दुष्ट का खात्मा कर रहा है, तो वह एक सच्चे गाँधी की हत्या नहीं करेगा, बल्कि उस गाँधी की करेगा जो उसे दुष्ट दिखाई दिया था।

प्रश्न—(क) इस गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) महात्मा गाँधी सच्ची अहिंसा के लिए मनुष्य में किस गुण का होना आवश्यक मानते हैं?

(ग) गाँधीजी को किस प्रकार मरना पसन्द था?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'सच्चे अहिंसावादी गाँधी जी।'

(ख) महात्मा गाँधी मानते हैं कि सच्ची अहिंसा के लिए मनुष्य में निर्भीकता का होना आवश्यक है।

(ग) गाँधीजी को अपना कर्त्तव्य-पालन करते हुए मरना पसन्द था। वह अपनी शक्ति क्षीण होने से अपंग बनकर एक हारे हुए आदमी की तरह मरना नहीं चाहते थे। वह अपने हत्यारे को क्षमा करके, ईश्वर की मूर्ति अपने मन में धारण कर, ईश्वर का नाम लेते हुए तथा अपना कर्तव्य पालन करते हुए मरना चाहते थे।

(6)

निर्लिप्त रहकर दूसरों का गला काटने वालों से लिप्त रहकर दूसरों की भलाई करने वाले कहीं अच्छे हैं—क्षात्रधर्म एकान्तिक नहीं है, उसका सम्बन्ध लोकरक्षा से है। अत: वह जनता के सम्पूर्ण जीवन को स्पर्श करने वाला है। 'कोई राजा होगा तो अपने घर का होगा'...... इससे बढ़कर झूठ बात शायद ही कोई और मिले। झूठे खिताबों के द्वारा यह कभी सच नहीं की जा सकती। क्षात्र जीवन के व्यापकत्व के कारण ही हमारे मुख्य अवतार-राम और कृष्ण- क्षत्रिय हैं। कर्म-सौन्दर्य की योजना जितने रूपों में क्षात्र जीवन में सम्भव है, उतने रूपों में और किसी जीवन में नहीं। शक्ति के साथ क्षमा, वैभव के साथ विनय, पराक्रम के साथ रूप-माधुर्य, तेज के साथ कोमलता, सुखभोग के साथ परदु:ख कातरता, प्रताप के साथ कठिन धर्म-पथ का अवलम्बन इत्यादि कर्म-सौन्दर्य के इतने अधिक प्रकार के उत्कर्ष-योग और कहाँ घट सकते हैं? इस व्यापार युग में, इस वणिग्धर्म-प्रधान युग में, क्षात्रधर्म की चर्चा करना शायद गई बात का रोना समझा जाय पर आधुनिक व्यापार की अन्यान्य रक्षा भी शस्त्रों द्वारा ही की जाती है। क्षात्रधर्म का उपयोग कहीं नहीं गया है- केवल धर्म के साथ उसका असहयोग हो गया है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) क्षात्रधर्म क्या है?

(ग) 'वणिग्धर्म' किसको कहा गया है तथा क्यों?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'क्षत्रिय धर्म और लोकरक्षा'।

(ख) क्षत्रिय का कर्त्तव्य ही क्षात्रधर्म है।

(ग) व्यापारी के काम को वणिग्धर्म कहा गया है। इसका उदेश्य समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति द्वारा धनार्जन करना है, किन्तु आज लोगों का ध्यान मानवीयता के स्थान पर धन कमाने में लगा हुआ है।

(7)

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में मुंशी प्रेमचन्द उपन्यास सम्राट के नाम से प्रसिद्ध हैं। अपने जीवन की अंतिम यात्रा उन्होंने मात्र 56 वर्ष की आयु में ही पूर्ण कर ली थी, यथापि उनकी एक-एक रचना उन्हें युगों-युगों तक जीवंत रखने में सक्षम है। 'गोदान' के संदर्भ में तो यहाँ तक कहा गया है कि यदि प्रेमचन्द के सारे ग्रंथों को जला दिया जाए और मात्र गोदान को बचाकर रख लिया जाए वहीं उन्हें हमेशा-हमेशा के लिए जीवित रखने को पर्याप्त है। प्रेमचन्द का जीवन भले ही अभावों में बीता हो, किंतु वे धन का गलत ढंग से उपार्जन करने से निर्धन रहना श्रेयस्कर समझते थे। एक बार धन कमाने की इच्छा से वे मुम्बई भी गए किंतु वहाँ का रंग-ढंग उन्हें श्रेष्ठ साहित्यकार के प्रतिकूल ही लगा। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास एवं कहानियों में किसान की दयनीय हालत, उपेक्षित वर्ग की समस्याएँ, बेमेल विवाह की समस्या को उजागर करके समाधान भी प्रस्तुत किए हैं। अंग्रेजी शासन काल में उनकी रचनाओं ने अस्त्र का कार्य किया, जिससे अंग्रेजों की नींद तक उड़ गई थी। आदर्श एवं यथार्थ का इतना सुंदर समन्वय शायद ही कहीं मिलेगा जितना कि प्रेमचन्द के उपन्यासों में मिलता है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) प्रेमचन्द कौन थे?

(ग) प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में किन समस्याओं को उठाया है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'उपन्यास-सम्राट मुंशी प्रेमचन्द'।

(ख) प्रेमचन्द हिन्दी के एक श्रेष्ठ कहानीकार-उपन्यासकार थे।

(ग) प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों तथा उपन्यासों में भारत के लोगों की समस्याओं को उठाया है। इनमें किसानों की बुरी दशा, पिछड़े तथा उपेक्षित लोगों की समस्याएँ, बेमेल विवाह आदि मुख्य हैं।

(8)

मनुष्य के जीवन पर शब्द का नहीं सद्-आचरण का प्रभाव पड़ता है। साधारण उपदेश तो हर गिरजे, हर मठ और हर मस्जिद में होते हैं, परन्तु उनका प्रभाव हम पर तभी पड़ता है जब गिरजे का पादरी स्वयं ईसा होता है, मंदिर का पुजारी स्वयं ब्रह्मर्षि होता है, मस्जिद का मुल्ला पैगम्बर और रसूल होता है।

यदि एक ब्राह्मण किसी डूबती कन्या की रक्षा के लिए—चाहे वह कन्या किसी जाति की हो, किसी मनुष्य की हो, किसी देश की हो-अपने आपको गंगा में फेंक दे—चाहे फिर उसके प्राण यह काम करने में रहें या जायें, तो इस कार्य के प्रेरक आचरण की मौनमयी भाषा किस देश में, किस जाति में और किस काल में कौन नहीं समझ सकता? प्रेम का आचरण, उदारता का आचरण, दया का आचरण—क्या पशु और क्या मनुष्य, जगत भर के सभी चराचर आप ही आप समझ लेते हैं। जगत भर के बच्चों की भाषा इस भाष्यहीन भाषा का चिह्न है। बालकों के शुद्ध मौन का नाद और हास्य भी सब देशों में एक-सा ही पाया जाता है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) मनुष्य पर किसका प्रभाव पड़ता है ?

(ग) भाष्यहीन भाषा का क्या अर्थ है? इसका स्वरूप कहाँ देखने को मिलता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'सदाचरण का मौन प्रभाव'।

(ख) मनुष्य पर मौन सदाचरण का प्रभाव पड़ता है, उपदेशक के शब्दों का नहीं।

(ग) भाष्यहीन भाषा का आशय है श्रेष्ठ एवं पवित्र आचरण। इसका स्वरूप हमें बच्चों में देखने को मिलता है। बच्चे जो कुछ कहते करते हैं उसमें बनावट और दिखावा तथा अपने पराये का भेदभाव नहीं होता।

(9)

सत्य से आत्मा का सम्बन्ध तीन प्रकार का है। एक जिज्ञासा का सम्बन्ध है, दूसरा प्रयोजन का सम्बन्ध है और तीसरा आनन्द का। जिज्ञासा का सम्बन्ध दर्शन का विषय है, प्रयोजन का सम्बन्ध विज्ञान का विषय है और साहित्य का विषय केवल आनन्द का सम्बन्ध है। सत्य जहाँ आनन्द स्रोत बन जाता है, वहीं वह साहित्य हो जाता है। जिज्ञासा का सम्बन्ध विचार से है, प्रयोजन का सम्बन्ध स्वार्थ-बुद्धि से तथा आनन्द का सम्बन्ध मनोभावों से है। साहित्य का विकास मनोभावों द्वारा ही होता है। एक ही दृश्य, घटना या कांड को हम तीनों ही भिन्न-भिन्न नजरों से देख सकते हैं। हिम से ढके हुए पर्वत पर उषा का दृश्य दार्शनिक के गहरे विचार की वस्तु है, वैज्ञानिक के लिए अनुसन्धान की और साहित्यिक के लिए विह्वलता की। विह्वलता एक प्रकार का आत्म-समर्पण है। यहाँ हम पृथकता का अनुभव नहीं करते। यहाँ ऊँच-नीच, भले-बुरे का भेद नहीं रह जाता। श्री रामचन्द्र शबरी के जूठे बेर क्यों प्रेम से खाते हैं, कृष्ण भगवान विदुर के शाक को क्यों नाना व्यंजनों से रुचिकर समझते हैं? इसीलिए कि उन्होंने इस पार्थक्य को मिटा दिया है। उनकी आत्मा विशाल है। उसमें समस्त जगत् के लिए स्थान है। आत्म, आत्मा से मिल गयी है। जिसकी आत्मा जितनी ही विशाल है, वह उतना ही महान् पुरुष है। यहाँ तक कि ऐसे महान् पुरुष भी हो गये हैं, जो जड़ जगत् से भी अपनी आत्मा का मेल कर सके हैं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) सत्य से आत्मा का सम्बन्ध कितने प्रकार का है?

(ग) कौन-सा गुण किसी को महान् बनाता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'सत्य से आत्मा का सम्बन्ध'।

(ख) सत्य से आत्मा का सम्बन्ध तीन प्रकार का होता है—पहला जिज्ञासा का सम्बन्ध, दूसरा प्रयोजन का सम्बन्ध तथा तीसरा आनन्द का सम्बन्ध।

(ग) आत्मा की विशालता और उदारता ही वह गुण है, जो मनुष्य को महान् बनाते हैं। विशाल हृदय में पृथकता का भाव नहीं रह पाता और सभी प्राणियों से अपनत्व हो जाता है।

(10)

राष्ट्रभाषा होने के लिए किसी भाषा में कुछ विशेषताएँ होना अनिवार्य होता है। सर्वप्रथम गुण उस भाषा की व्यापकता है। जो भाषा देश के सर्वाधिक जनों और सर्वाधिक क्षेत्र में बोली और समझी जाती हो वही राष्ट्रभाषा पद की अधिकारिणी होती है। भाषा की समृद्धता उसकी दूसरी विशेषता है। उस भाषा का शब्द-समुदाय ज्ञान-विज्ञान की सभी उपलब्धियों को व्यक्त करने की क्षमता रखता हो। धर्म, दर्शन, विज्ञान, सामाजिक परिवर्तन, अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य आदि सभी कुछ उस भाषा द्वारा जनसाधारण तक पहुँचाया जा सके। तीसरी विशेषता उसकी सरलता है। अन्य भाषा-भाषी उसे बिना कठिनाई के सीख सकें। उस भाषा की लिपि भी सरल और वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित हो तथा उस भाषा में निरन्तर विकसित होने की सामर्थ्य हो।

उपर्युक्त विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में विचार करने पर समस्त भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही राष्ट्रभाषा की अधिकतम योग्यता रखती है। देश की अधिसंख्यक जनता द्वारा वह बोली एवं समझी जाती है। ज्ञान-विज्ञान के विविध विषयों पर उसमें साहित्य-निर्माण हुआ है और हो रहा है। तकनीकी और पारिभाषिक शब्दावली के लिए जहाँ उसे संस्कृत का समृद्ध शब्द-भण्डार प्राप्त है वहीं उसकी पाचन-शक्ति भी उदार है। उसकी लिपि पूर्ण वैज्ञानिक है। इस प्रकार हिन्दी ने स्वयं को राष्ट्रभाषा का उत्तरदायित्व सँभालने के लिए गम्भीरता से तैयार किया है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) किसी भाषा के राष्ट्रभाषा होने के लिए उसमें सबसे अधिक किस गुण का होना आवश्यक है?

(ग) भारतीय भाषाओं में कौन-सी भाषा राष्ट्रभाषा होने की अधिकतम योग्यता रखती है तथा क्यों?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'राष्ट्रभाषा हिन्दी'।

(ख) किसी भाषा के राष्ट्रभाषा बनने के लिए उसका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण गुण है उसका राष्ट्र में व्यापक होना।

(ग) भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसमें राष्ट्रभाषा होने की अधिकतम योग्यता है। अधिकतम जन हिन्दी का प्रयोग करते हैं। इसका साहित्य विशाल, लिपि वैज्ञानिक तथा तकनीकी पारिभाषिक विशाल, समृद्ध शब्द भण्डार है।

(11)

आर्थिक असमानता एक बड़ी समस्या है। इसका वर्णन करते हुए आक्सफैम की रिपोर्ट में बताया गया है कि एक प्रतिशत सबसे अमीर भारतीयों के पास पिछले साल बढ़ी देश की आय का 73 प्रतिशत पैसा चला गया। दावोस में विश्व आर्थिक मंच के वार्षिक सम्मेलन से पहले यह रिपोर्ट जारी हुई है। जहाँ दुनिया की आर्थिक दशा पर विचार किया जाएगा। रिपोर्ट के अनुसार एक प्रतिशत भारतीय अमीरों की सम्पत्ति पिछले साल 4.9 लाख करोड़ से बढ़कर 20.9 लाख करोड़ हो गई। यह राशि 2016-17 के बजट के बराबर है। हर दो दिन में एक नया व्यक्ति अरबपति बन जाता है। भारत में 17 नए अरबपति बने हैं। इनकी संख्या 101 हो गई है। देश के 37% अरबपतियों की दौलत 2010 से हर साल तेरह प्रतिशत की गति से बढ़ रही है। यह सामान्य कर्मचारियों की आय की वृद्धि से छः गुना तेज है। भारत में एक सामान्य ग्रामीण 941 साल में जितना कमाता है, उतना निजी कम्पनी का उच्चाधिकारी एक साल से कम में कमा लेता है। इस असमानता की वृद्धि में आर्थिक सुधार की नीति का भी योगदान है।

प्रश्न—(क) उपर्युक्त गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) ऑक्सफैम की रिपोर्ट किस सम्बन्ध में है?

(ग) भारत में आर्थिक असमानता की वृद्धि किस प्रकार हो रही है।

उत्तर—(क) उचित शीर्षक—आर्थिक असमानता की समस्या ।

(ख) ऑक्सफैम की रिपोर्ट विश्व में बढ़ रही आर्थिक असमानता के सम्बन्ध में है।

(ग) भारत में आर्थिक असमानता तेजी से बढ़ रही है। हर दो दिन में एक नया अरबपति बन जाता है। भारतीय ग्रामीण 941 में जितना कमा पाता है, उतना एक कम्पनी का उच्चाधिकारी एक वर्ष में कमा लेता है।

(12)

हर किसी मनुष्य को अपने राष्ट्र के प्रति गौरव, स्वाभिमान होना आवश्यक है। राष्ट्र से जुड़े समस्त राष्ट्र प्रतीकों के प्रति भी हमें स्वाभिमान होना चाहिए। राष्ट्र प्रतीकों का यदि कोई अपमान करता है, तो उसका पुरजोर विरोध करना चाहिए। प्रत्येक राष्ट्राभिमानी व्यक्ति के हृदय में अपने देश, अपने देश की संस्कृति तथा अपने देश की भाषा के प्रति प्रेम होना स्वाभाविक भावना ही है। राष्ट्र के प्रति हर राष्ट्रवासी को राष्ट्र हित में अपने प्राणों का उत्सर्ग करने को तैयार रहना चाहिए। जिस देश के निवासियों के हृदय में यह उत्सर्ग भावना नहीं होती है, वह राष्ट्र शीघ्र ही पराधीन होकर अपनी सुख, शांति और समृद्धि को सदा के लिए खो बैठता है। देशभक्ति एवं सार्वजनिक हित के बिना राष्ट्रीय महत्ता का अस्तित्व ही नहीं रह सकता है। जिसके हृदय में राष्ट्रभक्ति है उसके हृदय में मातृभक्ति, पितृभक्ति, गुरुभक्ति, परिवार, समाज व सार्वजनिक हित की बात स्वतः ही आ जाती है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) राष्ट्राभिमानी व्यक्ति के हृदय में क्या स्वाभाविक भावना होती है?

(ग) देश के निवासियों में उत्सर्ग भावना नहीं होगी तो क्या हानि होगी?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'सच्ची राष्ट्रभक्ति'।

(ख) राष्ट्राभिमानी व्यक्ति के हृदय में अपने देश, अपने देश की संस्कृति और अपने देश की भाषा के प्रति प्रेम की स्वाभाविक भावना होती है।

(ग) यदि देशवासियों के हृदय में राष्ट्र के लिए उत्सर्ग की भावना नहीं होगी तो वह राष्ट्र शीघ्र ही पराधीन हो जाएगा। उसकी सुख, शांति और समृद्धि सदा के लिए नष्ट हो जाएगी तथा राष्ट्रीय महत्ता भी नहीं बचेगी।

(13)

भारतवर्ष पर प्रकृति की विशेष कृपा रही है। यहाँ सभी ऋतुएँ अपने समय पर आती हैं और पर्याप्त काल तक ठहरती हैं। ऋतुएँ अपने अनुकूल फल-फूलों का सृजन करती हैं। धूप और वर्षा के समान अधिकार के कारण यह भूमि शस्यश्यामला हो जाती है। यहाँ का नगाधिराज हिमालय कवियों को सदा से प्रेरणा देता आ रहा है और यहाँ की नदियाँ मोक्षदायिनी समझी जाती रही हैं। यहाँ कृत्रिम धूप और रोशनी की आवश्यकता नहीं पड़ती। भारतीय मनीषी जंगल में रहना पसन्द करते थे। प्रकृति-प्रेम के ही कारण यहाँ के लोग पत्तों में खाना पसन्द करते हैं। वृक्षों में पानी देना एक धार्मिक कार्य समझते हैं। सूर्य और चन्द्र दर्शन नित्य और नैमित्तिक कार्यों में शुभ माना जाता है।

पारिवारिकता पर हमारी संस्कृति में विशेष बल दिया गया है। भारतीय संस्कृति में शोक की अपेक्षा आनन्द को अधिक महत्व दिया गया है। इसलिए हमारे यहाँ शोकान्त नाटकों का निषेध है। अतिथि को भी देवता माना गया है—'अतिथि देवो भवः।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) भारतवर्ष की भूमि शस्यश्यामला कैसे है?

(ग) भारतीय प्रकृति-प्रेम किस प्रकार प्रकट करते हैं?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'भारत पर प्रकृति की कृपा'।

(ख) धूप तथा वर्षा की आवश्यकता तथा समयोचित प्राप्ति के कारण भारत की भूमि पर फसलें तथा पेड़-पौधे सदा उगते हैं और यह भूमि शस्यश्यामला रहती है।

(ग) भारत के लोग खाना खाने के लिए बर्तनों के स्थान पर पेड़ों के पत्तों का प्रयोग करते हैं। वे वृक्षों में पानी देना अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझते हैं तथा अनेक अवसरों पर सूर्य तथा चन्द्रमा का दर्शन करते हैं। इन बातों से उनका प्रकृति के प्रति प्रेम प्रकट होता है।

(14)

जीना भी एक कला है। लेकिन कला ही नहीं, तपस्या है। जियो तो प्राण डाल दो जिंदगी में, डाल दो जीवन रस के उपकरणों में। ठीक है। लेकिन क्यों? क्या जीने के लिए जीना ही बड़ी बात है? सारा संसार अपने मतलब के लिए ही तो जी रहा है। याज्ञवल्क्य बहुत बड़े ब्रह्मवादी ऋषि थे। उन्होंने अपनी पत्नी को विचित्र भाव से समझाने की कोशिश की कि सब कुछ स्वार्थ के लिए है। पुत्र के लिए पुत्र प्रिय नहीं होता, पत्नी के लिए पत्नी प्रिया नहीं होती—सब अपने मतलब के लिए प्रिय होते हैं—आत्मनस्तु कामाय सर्वप्रिय भवति। विचित्र नहीं है यह तर्क? संसार में जहाँ कहीं प्रेम है सब मतलब के लिए। सुना है, पश्चिम के हॉब्स और हेल्वेशियस जैसे विचारकों ने भी ऐसी ही बात कही है। सुन के हैरानी होती है। दुनिया में त्याग नहीं है, प्रेम नहीं है, परार्थ नहीं है, परमार्थ नहीं है—केवल प्रचण्ड स्वार्थ। भीतर की जिजीविषा—जीते रहने की प्रचण्ड इच्छा ही अगर बड़ी बात हो, तो फिर यह सारी बड़ी-बड़ी बोलियाँ, जिनके बल पर दल बनाये जाते हैं, शत्रु मर्दन का अभिनय किया जाता है, देशोद्धार का नारा लगाया जाता है, साहित्य और कला की महिमा गाई जाती है, झूठ है। इसके द्वारा कोई न कोई अपना बड़ा स्वार्थ सिद्ध करता है। लेकिन अन्तरतर से कोई कह रहा है, ऐसा सोचना गलत ढंग से सोचना है। स्वार्थ से भी बड़ी कोई-न-कोई बात अवश्य है, जिजीविषा से भी प्रचण्ड कोई-न-कोई शक्ति अवश्य है। क्या है?

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी को क्या समझाने की कोशिश की?

(ग) लेखक को किस बात पर हैरानी होती है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'जीने की कला'।

(ख) याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी को समझाने की कोशिश की कि यह समस्त संसार केवल अपने मतलब के लिए जी रहा है।

(ग) लेखक को यह जानकर हैरानी होती है कि संसार में लोग अपना स्वार्थ पूरा करने के लिए ही जीते हैं। परोपकार, देशोद्धार, साहित्य और कला आदि की बातें भी किसी बड़े स्वार्थ को पूरा करने के लिए की जाती हैं।

(15)

महानगरों में भीड़ होती है, समाज या लोग नहीं बसते। भीड़ उसे कहते हैं जहाँ लोगों का जमघट होता है। लोग तो होते हैं लेकिन उनकी छाती में हृदय नहीं होता; सिर होते हैं, लेकिन उनमें बुद्धि या विचार नहीं होता। हाथ होते हैं, लेकिन उन हाथों में पत्थर होते हैं, विध्वंस के लिए, वे हाथ निर्माण के लिए नहीं होते। यह भीड़ एक अंधी गली से दूसरी गली की ओर जाती है, क्योंकि भीड़ में होने वाले लोगों का आपस में कोई रिश्ता नहीं होता। वे एक-दूसरे के कुछ भी नहीं लगते। सारे अनजान लोग इकट्ठा होकर विध्वंस करने में एक-दूसरे का साथ देते हैं, क्योंकि जिन इमारतों, बसों या रेलों में ये तोड़-फोड़ के काम करते हैं, वे उनकी नहीं होतीं और न ही उनमें सफर करने वाले उनके अपने होते हैं। महानगरों में लोग एक ही बिल्डिंग में पड़ोसी के तौर पर रहते हैं, लेकिन यह पड़ोस भी संबंधरहित होता है। पुराने जमाने में दही जमाने के लिए जामन माँगने पड़ोस में लोग जाते थे, अब हर फ्लैट में फ्रिज है, इसलिए जामन माँगने जाने की भी जरूरत नहीं रही। सारा पड़ोस, सारे संबंध इस फ्रिज में 'फ्रीज' रहते हैं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) 'महानगरों में भीड़ होती है, समाज या लोग नहीं बसते'-इस वाक्य का आशय क्या है?

(ग) सारे संबंध इस फ्रिज में 'फ्रीज' रहते हैं—ऐसा क्यों कहा जाता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'महानगरों की असामाजिक संस्कृति।'

(ख) महानगरों में विशाल संख्या में लोग निवास करते हैं उनमें पारस्परिक सामाजिक संबंध नहीं होते हैं। वे एक-दूसरे को जानते नहीं, आपस में मिलते-जुलते भी नहीं हैं। पास रहने पर भी वे एक दूसरे के पड़ोसी नहीं होते।

(ग) फ्रिज खाद्य पदार्थों को ठंडा रखने के लिए प्रयोग होने वाला एक यंत्र है। आधुनिक समाज में परस्पर संबंधों में भी ठंडापन आ गया है। एक ही बिल्डिंग में रहने वाले लोग एक-दूसरे को जानते तक नहीं हैं।

(16)

प्राचीन-काल में जब धर्म-मजहब समस्त जीवन को प्रभावित करता था, तब संस्कृति के बनाने में उसका भी हाथ था; किन्तु धर्म के अतिरिक्त अन्य कारण भी सांस्कृतिक-निर्माण में सहायक होते थे। आज मजहब का प्रभाव बहुत कम हो गया है। अन्य विचार जैसे राष्ट्रीयता आदि उसका स्थान ले रहे हैं।

राष्ट्रीयता की भावना तो मजहबों से ऊपर है। हमारे देश में दुर्भाग्य से लोग संस्कृति को धर्म से अलग नहीं करते हैं। इसका कारण अज्ञान और हमारी संकीर्णता है। हम पर्याप्त मात्रा में जागरूक नहीं हैं। हमको नहीं मालूम है कि कौन-कौन-सी शक्तियाँ काम कर रही हैं और इसका विवेचन भी ठीक से नहीं कर पाते कि कौन-सा मार्ग सही है? इतिहास बताता है कि वही देश पतनोन्मुख हैं जो युग-धर्म की उपेक्षा करते हैं और परिवर्तन के लिए तैयार नहीं हैं। परन्तु हम आज भी अपनी आँखें नहीं खोल पा रहे हैं।

परिवर्तन का यह अर्थ कदापि नहीं है अतीत की सर्वथा उपेक्षा की जाए। ऐसा हो भी नहीं सकता। अतीत के वे अंश जो उत्कृष्ट और जीवन-प्रद हैं उनकी तो रक्षा करनी ही है; किन्तु नये मूल्यों का हमको स्वागत करना होगा तथा वह आचार-विचार जो युग के लिए अनुपयुक्त और हानिकारक हैं, उनका परित्याग भी करना होगा।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) हमारे देश में संस्कृति और धर्म को लेकर क्या भ्रम है?

(ग) परिवर्तन का सही अर्थ क्या है?

उत्तर—(क) शीर्षक—धर्म, संस्कृति और राष्ट्रीयता।

(ख) हमारे देश में धर्म और संस्कृति के सम्बन्ध में यह भ्रम व्याप्त है कि दोनों एक ही वस्तु हैं।

(ग) परिवर्तन का यह अर्थ ठीक नहीं है कि अतीत की उपेक्षा की जाय। अतीत के अनुपयुक्त तथा हानिकारक विचारों को त्यागना उपयुक्त विचारों को बनाए रखना तथा वर्तमान के नवीन जीवन मूल्यों का स्वागत करना ही परिवर्तन का सही रूप है।

(17)

आजकल लोगों ने कविता और पद्य को एक ही चीज समझ रखा है। यह भ्रम है। किसी प्रभावोत्पादक और मनोरंजक लेखन, बात या भाषण का नाम कविता है और नियमानुसार तुली हुई पंक्तियों का नाम पद्य है। हाँ, एक बात जरूर है कि वह वजन और काफिये से अधिक चित्ताकर्षक हो जाती है, पर कविता के लिये ये बातें ऐसी हैं जैसे कि शरीर के लिये वस्त्राभरण। यदि कविता का प्रधान धर्म मनोरंजन और प्रभावोत्पादकता न हो तो उसका होना निष्फल ही समझना चाहिये। पद्य के लिए काफिये वगैरह की जरूरत है, कविता के लिए नहीं। कविता के लिए तो ये बातें एक प्रकार से उल्टी हानिकारक हैं। तुले हुए शब्दों में कविता करने और तुक, अनुप्रास आदि ढूँढ़ने से कवियों के विचार-स्वातन्त्र्य में बड़ी बाधा आती है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) कविता और पद्य में क्या अन्तर है?

(ग) वजन और काफिए से कविता पर क्या प्रभाव पड़ता है?

उत्तर—(क) शीर्षक—कविता और पद्य।

(ख) कविता प्रभावोत्पादक और मनोरंजक लेखन, बात या भाषण है किन्तु पद्य नियमानुसार तुली हुई पंक्तियों को कहते हैं।

(ग) वजन और काफिए के प्रयोग से कविता का आकर्षण बढ़ जाता है, किन्तु इनके कारण वह मूल उद्देश्य से भटक जाती है। इनके कारण कवि के विचार-स्वातन्त्र्य में भी बाधा आती है।

(18)

हमारे देश को दो बातों की सबसे पहले और सबसे ज्यादा जरूरत है। एक शक्तिबोध और दूसरा सौन्दर्यबोध। शक्तिबोध का अर्थ है—देश की शक्ति या सामर्थ्य का ज्ञान। दूसरे देशों की तुलना में अपने देश को हीन नहीं मानना चाहिए। इससे देश के शक्तिबोध को आघात पहुँचता है। सौन्दर्य बोध का अर्थ है किसी भी रूप में कुरुचि की भावना को पनपने न देना। इधर-उधर कूड़ा फेंकने, गंदे शब्दों का प्रयोग, इधर की उधर लगाने, समय देकर न मिलना आदि से देश के सौन्दर्य-बोध को आघात पहुँचता है। देश के शक्तिबोध को जगाने के लिए हमें चाहिए कि हम सदा दूसरे देशों की अपेक्षा अपने देश को श्रेष्ठ समझें। ऐसा न करने से देश के शक्तिबोध को आघात पहुँचता है। यह उदाहरण इस तथ्य की पुष्टि करता है—शल्य महाबली कर्ण का सारथी था। जब भी कर्ण अपने पक्ष की विजय की घोषणा करता, हुँकार भरता, वह अर्जुन की अजेयता का एक हल्का-सा उल्लेख कर देता। बार-बार इस उल्लेख ने कर्ण के सघन आत्मविश्वास में संदेह की तरेड़ डाल दी, जो उसके भावी पराजय की नींव रखने में सफल हो गई।

प्रश्न—(क) उपर्युक्त गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) शक्तिबोध का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(ग) सौन्दर्यबोध को किन बातों से आघात पहुँचता है?

उत्तर—(क) शीर्षक—शक्तिबोध और सौन्दर्य-बोध।

(ख) शक्तिबोध का अर्थ है—अपने देश की शक्ति तथा सामर्थ्य का ज्ञान होना, उसको दूसरे देशों के समक्ष शक्तिहीन न मानना।

(ग) सौन्दर्यबोध को असंतुलित तथा अनुचित व्यवहार से चोट पहुँचती है। इधर-उधर कूड़ा फेंकना, इधर की बात उधर करना, समय देकर न मिलना, बोल-चाल में गन्दे शब्दों का प्रयोग करना आदि देश के सौन्दर्यबोध को हानि पहुँचाने वाली बातें हैं।

(19)

कर्म के मार्ग पर आनन्दपूर्वक चलता हुआ लोकोपकारी उत्साही मनुष्य यदि अन्तिम फल तक न भी पहुँचे तो भी उसकी दशा कर्म न करने वाले की अपेक्षा अधिकतर अवस्थाओं में अच्छी रहेगी; क्योंकि एक तो कर्म-काल में उसका जो जीवन बीता, वह सन्तोष या आनन्द में बीता। उसके उपरान्त फल की अप्राप्ति पर भी उसे यह पछतावा न रहा कि मैंने प्रयत्न नहीं किया। बुद्धि-द्वारा पूर्णरूप से निश्चित की हुई व्यापार-परम्परा का नाम ही प्रयत्न है।

कभी-कभी आनन्द का मूल विषय तो कुछ और रहता है, पर उस आनन्द के कारण एक ऐसी स्फूर्ति उत्पन्न होती है, जो बहुत से कामों की ओर हर्ष के साथ अग्रसर करती है। इसी प्रसन्नता और तत्परता को देखकर लोग कहते हैं कि वे काम बड़े उत्साह से किये जा रहे हैं। यदि किसी मनुष्य को बहुत-सा लाभ हो जाता है या उसकी कोई बड़ी भारी कामना पूर्ण हो जाती है तो जो काम उसके सामने आते हैं उन सबको वह बड़े हर्ष व तत्परता के साथ करता है। उसके इस हर्ष और तत्परता को ही उत्साह कहते हैं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) प्रयत्न किसे कहते हैं?

(ग) अपने कार्यों का अनुकूल परिणाम न मिलने पर उत्साही व्यक्ति की क्या दशा होती है?

उत्तर—(क) शीर्षक—'कर्मपथ का आनन्द'।

(ख) बुद्धि द्वारा निश्चित कार्य-प्रणाली को प्रयत्न कहते हैं।

(ग) कर्म करने पर भी अपने कर्म का अनुकूल परिणाम न मिलने पर उत्साही मनुष्य को यह पछतावा नहीं होता कि उसने कर्म किया ही नहीं। उसे यह संतोष और आनन्द रहता है कि उसका जीवन कर्म करते हुए ही बीता।

(20)

मितव्ययता का अर्थ है—आय की अपेक्षा कम व्यय करना, आमदनी से कम खर्च करना। सभी लोगों की आय एक-सी नहीं होती न ही निश्चित होती है। आज कोई सौ कमाता है तो कल दस की भी उपलब्धि नहीं होती। आय निश्चित भी हो तब भी उसमें से कुछ-न-कुछ अवश्य बचाना चाहिए। जीवन में अनेक बार ऐसे अवसर आ जाते हैं, आकस्मिक दुर्घटनाएँ हो जाती हैं। बहुत बार रोग और अन्य शारीरिक आपत्तियाँ आ घेरती हैं। यूँ भी संकट कभी कहकर नहीं आता। यदि पहले से मितव्ययता का आश्रय न लिया जाए तो मान-अपमान का कुछ ध्यान न रखकर इधर-उधर हाथ फैलाने पड़ते हैं। विपत्ति-काल में प्राय: अपने भी साथ छोड़ देते हैं। उस समय सहायता मिलनी कठिन हो जाती है। मिल भी जाए तो मनुष्य ऋण के बन्धन में ऐसा जकड़ जाता है कि आयुपर्यंत अथवा पर्याप्त काल के लिए उससे मुक्त होना दुष्कर होता है। जो मितव्ययी नहीं होते, वे प्राय: दूसरों के कर्जदार रहते हैं। ऋण से बढ़कर कोई दुख और संकट नहीं है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) मितव्ययता किसको कहते हैं?

(ग) बचत करना क्यों आवश्यक है?

उत्तर—(क) शीर्षक—'मितव्ययता का महत्व'।

(ख) अपनी आमदनी से कम खर्च करना मितव्ययता कहलाता है।

(ग) जीवन में कुछ आकस्मिक खर्चे आ जाते हैं। कभी आदमी बीमार हो जाता है तो कभी दुर्घटना हो जाती है। इनमें जो व्यय होता है, उसकी पूर्ति के लिए बचत करना जरूरी होता है।

(21)

प्रत्येक व्यक्ति अपनी उन्नति और विकास चाहता है और यदि एक की उन्नति और विकास, दूसरे की उन्नति और विकास में बाधक हो, तो संघर्ष पैदा होता है और यह संघर्ष तभी दूर हो सकता है जब सबके विकास के पथ अहिंसा के हों। हमारी सारी संस्कृति का मूलाधार इसी अहिंसा तत्व पर स्थापित रहा है। जहाँ-जहाँ हमारे नैतिक सिद्धान्तों का वर्णन आया है, अहिंसा को ही उनमें मुख्य स्थान दिया गया है। अहिंसा का दूसरा नाम या दूसरा रूप त्याग है। श्रुति कहती है— 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:'। इसी के द्वारा हम व्यक्ति-व्यक्ति के बीच का विरोध, व्यक्ति और समाज के बीच का विरोध, समाज और समाज के बीच का विरोध, देश और देश के बीच के विरोध को मिटाना चाहते हैं। हमारी सारी नैतिक चेतना इसी तत्व से ओत-प्रोत है। इसलिए हमने भिन्न-भिन्न विचारधाराओं, धर्मों और सम्प्रदायों को स्वतन्त्रतापूर्वक पनपने और भिन्न-भिन्न भाषाओं को विकसित और प्रस्फुटित होने दिया, भिन्न-भिन्न देशों की संस्कृतियों को अपने में मिलाया। देश और विदेश में एकसूत्रता, तलवार के जोर से नहीं, बल्कि प्रेम और सौहार्द्र से स्थापित की।

प्रश्न—(क) गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक लिखिए।

(ख) संघर्ष कब पैदा होता है?

(ग) विरोध किन-किन के बीच उत्पन्न होता है तथा उसको कैसे दूर किया जा सकता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक 'भारतीय संस्कृति के तत्व'।

(ख) जब एक के विकास और उन्नति में दूसरे का विकास और उन्नति बाधक बनते हैं तो संघर्ष उत्पन्न होता है।

(ग) विरोध दो व्यक्तियों के बीच, व्यक्ति और समाज के बीच, दो समाजों के बीच तथा दो देशों के बीच उत्पन्न होता है। इस विरोध को अहिंसा और त्याग की भावना का सहारा लेकर मिटाया जा सकता है।

(22)

हर राष्ट्र को अपने सामान्य काम-काज एवं राष्ट्रव्यापी व्यवहार के लिए किसी एक भाषा को अपनाना होता है। राष्ट्र की कोई एक भाषा स्वाभाविक विकास और विस्तार करती हुई अधिकांश जन-समूह के विचार-विनिमय और व्यवहार का माध्यम बन जाती है। इसी भाषा को वह राष्ट्र, राष्ट्रभाषा का दर्जा देकर, उस पर शासन की स्वीकृति की मुहर लगा देता है। हर राष्ट्र की प्रशासकीय-सुविधा तथा राष्ट्रीय-एकता और गौरव के निमित्त एक राष्ट्रभाषा का होना परम आवश्यक होता है। सरकारी काम-काज की केन्द्रीय भाषा के रूप में यदि एक भाषा स्वीकृत न होगी तो प्रशासन में नित्य ही व्यावहारिक कठिनाइयाँ आयेंगी। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में भी राष्ट्र की निजी भाषा का होना गौरव की बात होती है।

एक राष्ट्रभाषा के लिए सर्वप्रथम गुण है—उसकी 'व्यापकता'। राष्ट्र के अधिकांश जन-समुदाय द्वारा वह बोली तथा समझी जाती हो। दूसरा गुण है—'उसकी समृद्धता'। वह संस्कृति, धर्म, दर्शन, साहित्य एवं विज्ञान आदि विषयों को अभिव्यक्त करने की सामर्थ्य रखती हो। उसका शब्दकोष व्यापक और विशाल हो और उसमें समयानुकूल विकास की सामर्थ्य हो।

प्रश्न—(क) गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक लिखिए।

(ख) राष्ट्रभाषा की आवश्यकता क्यों होती है?

(ग) राष्ट्रभाषा का आविर्भाव कैसे होता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का शीर्षक है—'राष्ट्रभाषा की आवश्यकता'।

(ख) राष्ट्र की प्रशासकीय सुविधा, राष्ट्रीय एकता एवं गौरव के लिए राष्ट्रभाषा आवश्यक होती है।

(ग) जब कोई भाषा अधिकांश जन-समूह के विचार-विनिमय और व्यवहार का माध्यम बन जाती है तब इस भाषा को शासन द्वारा राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया जाता है। इस प्रकार राष्ट्रभाषा का आविर्भाव होता है।

(23)

कर्तव्य-पालन और सत्यता में बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। जो मनुष्य अपना कर्तव्य-पालन करता है वह अपने कामों और वचनों में सत्यता का बर्ताव भी रखता है। वह ठीक समय पर उचित रीति से अच्छे कामों को करता है। सत्यता ही एक ऐसी वस्तु है जिससे इस संसार में मनुष्य अपने कार्यों में सफलता पा सकता है; इसीलिए हम लोगों को अपने कार्यों में सत्यता को सबसे ऊँचा स्थान देना उचित है। झूठ की उत्पत्ति पाप, कुटिलता और कायरता के कारण होती है।

बहुत से लोग नीति और आवश्यकता के बहाने झूठ की बात करते हैं। वे कहते हैं कि समय पर बात को प्रकाशित न करना और दूसरी बात को बनाकर कहना, नीति के अनुसार, समयानुकूल और परम आवश्यक है।

झूठ बोलना और कई रूपों में दिखाई पड़ता है। जैसे चुप रहना, किसी बात को बढ़ा-चढ़ा कर कहना, किसी बात को छिपाना, भेद बतलाना, झूठ-मूठ दूसरों के साथ हाँ में हाँ मिलाना, प्रतिज्ञा करके उसे पूरा न करना और सत्य को न बोलना इत्यादि। जबकि ऐसा करना धर्म के विरुद्ध है, तब ये सब बातें झूठ बोलने से किसी प्रकार कम नहीं हैं।

प्रश्न—(क) गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक लिखिए।

(ख) संसार में मनुष्य को सफलता दिलाने वाली वस्तु क्या है?

(ग) झूठ बोलना किन-किन रूपों से दिखाई देता है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक—'कर्त्तव्य और सत्यता'।

(ख) संसार में मनुष्य को सफलता दिलाने वाली वस्तु 'सत्यता' है।

(ग) झूठ बोलना अनेक रूपों में दिखाई देता है। चुप रहना किसी बात को छिपाना, बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहना, दूसरों की हाँ में हाँ मिलाना, अपनी प्रतिज्ञा का पालन न करना, सत्य न बोलना आदि झूठ बोलने के ही रूप हैं।

(24)

कहा जाता है कि हमारा लोकतंत्र यदि कहीं कमजोर है तो उसकी एक बड़ी वजह हमारे राजनीतिक दल हैं। वे प्राय: अव्यवस्थित हैं, अमर्यादित हैं और अधिकांशत: निष्ठा और कर्मठता से सम्पन्न नहीं हैं। हमारी राजनीति का स्तर प्रत्येक दृष्टि से गिरता जा रहा है। लगता है उसमें सुयोग्य और सच्चरित्र लोगों के लिए कोई स्थान नहीं है। लोकतंत्र के मूल में लोकनिष्ठा होनी चाहिए, लोकमंगल की भावना और लोकानुभूति होनी चाहिए और लोकसम्पर्क होना चाहिए। हमारे लोकतंत्र में इन आधारभूत तत्वों की कमी होने लगी है, इसलिए लोकतंत्र कमजोर दिखाई पड़ता है। हम प्राय: सोचते हैं कि हमारा देश-प्रेम कहाँ चला गया, देश के लिए कुछ करने, मर-मिटने की भावना कहाँ चली गई? त्याग और बलिदान के आदर्श कैसे, कहाँ लुप्त हो गए? आज हमारे लोकतंत्र को स्वार्थान्धता का घुन लग गया है। क्या राजनीतिज्ञ, क्या अफसर, अधिकांश यही सोचते हैं कि वे किस तरह से स्थिति का लाभ उठाएँ, किस तरह एक-दूसरे का इस्तेमाल करें। आम आदमी अपने आपको लाचार पाता है और ऐसी स्थिति में उसकी लोकतांत्रिक आस्थाएँ डगमगाने लगती हैं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) लोकतंत्र के मूल में किस बात का होना आवश्यक है?

(ग) भारत के राजनैतिक दलों में क्या दोष हैं?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'भारतीय लोकतंत्र की कमजोरियाँ'।

(ख) लोकतन्त्र के मूल में लोक निष्ठा, लोकानुभूति, लोकमंगल की भावना तथा लोक-सम्पर्क का होना आवश्यक है।

(ग) भारत के राजनैतिक दलों में अनेक दोष हैं। वे अव्यवस्थित और अमर्यादित हैं। उनमें निष्ठा और कर्मठता का अभाव है। उनका राजनैतिक स्तर गिर रहा है तथा उनमें सुयोग्य और चरित्रवान लोगों के लिए स्थान नहीं है।

(25)

इधर मैं सोचने लगा हूँ कि अछूतों के साथ या उनके हाथ का खाना-पीना अथवा उनके लिए मन्दिरों का द्वार खोलना केवल रूमानी औपचारिकताएँ अथवा प्रदर्शन हैं। समाज में उनको अपना यथोचित स्थान तभी मिलेगा, जब उनमें शिक्षा का व्यापक प्रचार हो और उनका आर्थिक स्तर ऊपर उठे। साथ ही जाति की शृंखला को ऊपर से नीचे तक टूटना नहीं तो ढीली अवश्य होना होगा। जाति की जड़, अर्थहीन और हानिकारक रूढ़ियों से निम्न वर्ग के लोग उतने ही जकड़े हैं जितने कि उच्च वर्ग के लोग। एक छोटा-सा कदम इस दिशा में यह उठाया जा सकता है कि लोग अपने नाम के साथ अपनी जाति का संकेत करना बन्द कर दें। जिन दिनों मैं यूनीवर्सिटी में अध्यापक था, मैं अपने बहुत-से विद्यार्थियों को प्रेरित करता था कि वे अपने नाम के साथ अपनी जाति न जोड़ें—अपने को रामप्रसाद त्रिपाठी नहीं, केवल रामप्रसाद कहें। भारत की आजाद सरकार चाहती तो एक विधेयक से नाम के साथ जाति लगाना बन्द करा सकती थी—कम से कम सरकारी कागजों से जाति का कॉलम हटा सकती थी, इसके परिणाम दूरगामी और हितकर होते। पर अभी इसमें कुछ भी क्रान्तिकारी करने का साहस नहीं है। वह जैसा चला आया है वैसा ही, या उसमें थोड़ा-बहुत हेर-फेर करके चलाए जाने में ही अपनी चातुरी और सुरक्षा समझती है।

प्रश्न—(क) उपर्युक्त गद्यांश के लिए एक उपयुक्त शीर्षक लिखिए।

(ख) "रूमानी औपचारिकताएँ अथवा प्रदर्शन" इस वाक्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

(ग) समाज से जाति-प्रथा को दूर करने के लिए स्वाधीन भारत की सरकार का रवैया कैसा है?

उत्तर—(क) उपयुक्त शीर्षक—'अहितकर जाति प्रथा'।

(ख) इसका आशय है कि अछूतों के साथ खाने-पीने या मन्दिरों में उनका प्रवेश कराने से उनका कुछ भला नहीं होगा। ये बातें आकर्षक दिखावा हैं, दलितों के उत्थान के वास्तविक उपाय नहीं।

(ग) समाज से जाति प्रथा को दूर करने के सम्बन्ध में स्वाधीन भारत की सरकार का रवैया उपेक्षा तथा गैर-जिम्मेदारी का है।

(26)

आज भारतीय समाज में दहेज के नग्न नृत्य को देखकर किसी भी समाज और देश के हितैषी का हृदय लज्जा और दु:ख से भर उठेगा। इस प्रथा से केवल व्यक्तिगत हानि हो, ऐसी बात नहीं। इससे समाज और राष्ट्र को महान हानि पहुँचती है। तड़क-भड़क, शान-शौकत के प्रति आकर्षण से धन का अपव्यय होता है। समाज की क्रियाशील और उत्पादक पूँजी व्यर्थ नष्ट होती है। जीवन में भ्रष्टाचार की वृद्धि होती है। नारी के सम्मान पर चोट होती है। आत्महत्या और आत्महीनता की भावनाएँ जन्म लेती हैं, परन्त इस अभिशाप से मुक्ति का उपाय क्या है? इसके दो पक्ष हैं—जनता और शासन। शासन कानून बनाकर इसे समाप्त कर सकता है और कर भी रहा है, किन्तु बिना जन-सहयोग के ये कानून प्रभावी नहीं हो सकते। इसके लिए महिला वर्ग को और कन्याओं को स्वयं संघर्षशील बनना होगा, स्वावलम्बिनी और स्वाभिमानिनी बनना होगा। ऐसे वरों का तिरस्कार करना होगा, जो उन्हें धन-प्राप्ति का साधन मात्र समझते हैं। इसके साथ ही धर्माचार्यों का भी दायित्व है कि वे अपने लोभ के कारण समाज को संकट में न डालें। अविवाहित कन्या के घर में रहने से मिलने वाला नरक, जीते-जी प्राप्त नरक से अच्छा रहेगा। हमारी कन्याएँ हमसे विद्रोह करें और हम मजबूरन सही रास्ते पर आएँ, इससे तो यही अच्छा होगा कि हम पहले ही सँभल जाएँ।

प्रश्न—(क) उपर्युक्त गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) दहेज प्रथा के व्यक्ति और समाज पर क्या कुप्रभाव होते हैं?

(ग) दहेज प्रथा की समाप्ति के लिए महिलाओं और कन्याओं को क्या करना होगा?

उत्तर—(क) गद्यांश का शीर्षक—'दहेज-प्रथा का दोष'।

(ख) दहेज प्रथा से व्यक्ति के जीवन में दुश्चिंता, अपमान और तनाव तथा सामाजिक जीवन में धन के दुरुपयोग, भ्रष्टाचार और असमानता की समस्यायें पनपती हैं।

(ग) दहेज-प्रथा की समाप्ति के लिए महिलाओं और कन्याओं को स्वयं संघर्ष करना होगा। उनको स्वावलम्बी और स्वाभिमानी बनना होगा। उन्हें दहेज लोभियों का तिरस्कार और बहिष्कार करना होगा।

(27)

ऐसा कोई शारीरिक क्रियाकलाप नहीं, जो मन की इच्छा के विपरीत होता हो। जिसकी आज्ञा के बिना कोई काम न हो, उसे मालिक नहीं, तो और क्या कहेंगे? शरीर में ऐसा कोई अंग अवयव नहीं, जो मन की उपेक्षा कर सके। मन से बलवान आत्मा है, इससे ज्यादा ताकतवर शरीर में कोई नहीं। यह जानने के बाद इंकार का कोई कारण नहीं कि मन का संतुलन शोक, रोग, बीमारियों के रूप में भी प्रभावित करता है। विज्ञान भी अब मानने लगा है। कनाडा के शरीर शास्त्री और मनोविज्ञानी डॉ. डैनियल कापोने के अनुसार, साधारण सा जुकाम केवल मानसिक कारणों से होता है। वह कहते हैं कि जुकाम का निमित्त कारण विषाणु हो सकता है, पर उनकी प्रकृति अन्य विषाणुओं से अलग होती है। चेचक, खसरा, डेंगू, चिकनगुनिया आदि रोग एक बार होते हैं, तो शरीर में उनसे लड़ने की शक्ति आ जाती है। ठीक होने के बाद इन रोगों के दोबारा होने का खतरा लगभग नहीं रहता। लेकिन सर्दी-जुकाम पर यह बात लागू नहीं होती। वह कई बार होता और लगातार बना रहता है। जब तक मानसिक तनाव कम नहीं होता, वह काबू में आता भी नहीं। चाहे कितनी ही एंटीबायोटिक, एंटी-एलर्जिक दवा ली जा रही हों। वैसे तो दवाओं से यह जल्द ठीक हो जाता है, लेकिन फिर नहीं होगा इसकी कोई गारंटी नहीं। मन बहलाने के लिए चाहे जितनी दवाएँ ली जाती रहें, लेकिन सही बात यह है कि रोग की कोई दवा नहीं होती, क्योंकि कारण कहीं और है, चिकित्सा कहीं और की हो रही है। चिकित्सा-विज्ञान ने भी यह मान लिया है कि दवा से नहीं मन पर नियंत्रण कर बीमारी को दूर किया जा सकता है।

प्रश्न—(क) उपर्युक्त गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) मानव शरीर में मन का क्या स्थान है?

(ग) जुकाम की बीमारी के बारे में मनोविज्ञानी डॉ. डैनियल कापोन का क्या कहना है?

उत्तर—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक—'तन का राजा मन।'

(ख) मानव शरीर में मन सभी अंगों को नियंत्रित करता है। वे उसके आदेश के अनुसार ही काम करते हैं।

(ग) डॉ. डेनियल का मानना है कि जुकाम मानसिक कारण से होता है। मानसिक तनाव जब तक बना रहता है, वह काबू में नहीं आता । एंटी बायोटिक तथा एंटी अलर्जिक दवाएँ कुछ समय तक ही प्रभावी होती हैं।

(28)

भिखारी की भाँति गिड़गिड़ाना प्रेम की भाषा नहीं है। यहाँ तक कि मुक्ति के लिए भगवान की उपासना करना भी अधम उपासना में गिना जाता है। प्रेम कोई पुरस्कार नहीं चाहता। प्रेम में आतुरता नहीं होती। प्रेम सर्वथा प्रेम के लिए ही होता है। भक्त इसलिए प्रेम करता है कि बिना प्रेम किए वह रह ही नहीं सकता। जब हम किसी प्राकृतिक दृश्य को देखकर उस पर मुग्ध हो जाते हैं तो उस दृश्य से हम किसी फल की याचना नहीं करते और न वह दृश्य ही हमसे कुछ चाहता है; तो भी वह दृश्य हमें बड़ा आनन्द देता है। वह हमारे मन को पुलकित और शान्त कर देता है और हमें साधारण सांसारिकता से ऊपर उठाकर एक स्वर्गीय आनन्द से सराबोर कर देता है। इसलिए प्रेम के बदले कुछ माँगना प्रेम का अपमान करना है। प्रेम करना नंगी तलवार की धार पर चलने जैसा है क्योंकि स्वार्थ के लिए, दिखाने के लिए तो सभी प्रेम करते हैं, उसे निभाते नहीं। वे पाना चाहते हैं, देना नहीं। वे वस्तुत: प्रेम शब्द को कलंकित करते हैं।

प्रश्न—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक दीजिए।

(ख) मुक्ति के लिए भगवान की उपासना करना कैसी उपासना है तथा क्यों?

(ग) प्रेम करना नंगी तलवार की धार पर चलने के समान क्यों है?

उत्तर—(क) शीर्षक—सच्चा प्रेम।

(ख) मुक्ति के लिए भगवान की उपासना करना अधम उपासना है।

(ग) प्रेम में त्याग भाव का होना आवश्यक है। अपना सुख छोड़कर दूसरे का सुख चाहना अत्यन्त कठिन काम है। अत: प्रेम करना नंगी तलवार की धार पर चलने के समान है।

अभ्यास प्रश्न

नीचे अभ्यास हेतु कुछ अपठित गद्यांश दिए गए हैं। विद्यार्थी उनके नीचे दिए गए प्रश्नों का उत्तर स्वयं लिखें।

1. अनुशासन किसी वर्ग या आयु-विशेष के लिए ही नहीं, अपितु सभी के लिए ही परमावश्यक होता है। जिस जाति, देश और राष्ट्र में अनुशासन का अभाव होता है, वह अधिक समय तक अपना अस्तित्व नहीं बनाए रख सकता है। जो विद्यार्थी अपनी दिनचर्या निश्चित अवस्था में नहीं ढाल पाता, वह निरर्थक है क्योंकि विद्या ग्रहण करने में व्यवस्था ही सर्वोपरि है। अनुशासन का पालन करते हुए जो विद्यार्थी योगी की तरह विद्याध्ययन में जुट जाता है, वही सफलता पाता है। अनुशासन के अभाव में विद्यार्थी का जीवन शून्य बन जाता है। कुछ व्यवधानों के कारण विद्यार्थी अनुशासित नहीं रह पाता और अपना जीवन नष्ट कर लेता है। सर्वप्रथम बाधा है—उसके मन की चंचलता। उसे अनुभव नहीं होता है, इसलिए गुरुजनों की आज्ञाएँ तथा विद्यालयों के नियम, अभिभावकों की सलाह उसे कारागार के समान प्रतीत होते हैं। वह उनसे मुक्ति का मार्ग तलाशता रहता है। कर्त्तव्यों को तिलांजलि देकर केवल अधिकारों की माँग करता है। हर प्रकार से केवल अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए संघर्ष पर उतारू हो जाता है और यहीं से उच्छृंखलता और अनुशासनहीनता का जन्म होता है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का एक उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) अनुशासन किनके लिए आवश्यक होता है?

(ग) विद्यार्थी जीवन में अनुशासित रहने में क्या बातें बाधक होती हैं?

2. सभ्यता और तथाकथित संस्कृति लोक-साहित्य की महान् शत्रु है। प्रोफेसर किटरीज ने कहा है—शिक्षा इस मौखिक साहित्य की मित्र नहीं होती। वह उसे इस वेग से नष्ट करती है कि देखकर आश्चर्य होता है। ज्यों ही कोई जाति लिखना-पढ़ना सीख जाती है त्यों ही वह अपनी परम्परागत कथाओं की अवहेलना करने लग जाती है, यहाँ तक कि उनसे थोड़ी-बहुत लज्जा

का अनुभव करने लगती है और अंत में उनकी याद रखने तथा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित करने की इच्छा एवं शक्ति से भी हाथ धो बैठती है। जो चीज कभी समस्त जनता की थी, वह केवल निरक्षरों की सम्पत्ति रह जाती है और यदि पुरातत्व प्रेमियों द्वारा संगृहीत न की जाय तो सदा के लिए विलुप्त हो जाती है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत गद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) लोक-साहित्य को मौखिक साहित्य क्यों कहा गया है?

(ग) किसी जाति के पढ़ना-लिखना सीखने पर लोक-साहित्य के प्रति उसमें क्या भावना उत्पन्न हो जाती है? इसका क्या परिणाम होता है?

3. गाँधीजी के अनुसार शिक्षा, शरीर, मस्तिष्क और आत्मा का विकास करने का माध्यम है। वे 'बुनियादी शिक्षा' के पक्षधर थे। उनके अनुसार प्रत्येक बच्चे को अपनी मातृभाषा की निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा मिलनी चाहिए, जो उसके आस-पास की जिन्दगी पर आधारित हो; हस्तकला एवं काम के जरिए दी जाए; रोजगार दिलाने के लिए बच्चे को आत्मनिर्भर बनाए तथा नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करने वाली हो। गाँधीजी के उक्त विचारों से स्पष्ट है कि वे व्यक्ति और समाज के सम्पूर्ण जीवन पर अपनी मौलिक दृष्टि रखते थे तथा उन्होंने अपने जीवन में सामाजिक एवं राजनीतिक आन्दोलनों में भाग लेकर भारतीय समाज एवं राजनीति में इन मूल्यों को स्थापित करने की कोशिश की। गाँधीजी की सारी सोच भारतीय परम्परा की सोच है तथा उनके दिखाए मार्ग को अपनाकर प्रत्येक व्यक्ति को सम्पूर्ण राष्ट्र वास्तविक स्वतन्त्रता, सामाजिक सद्भाव एवं सामुदायिक विकास को प्राप्त कर सकता है। भारतीय समाज जब-जब भटकेगा तब-तब गाँधीजी उसका मार्गदर्शन करने में सक्षम रहेंगे।

प्रश्न—(क) गद्यांश का उचित शीर्षक दीजिए।

(ख) गाँधीजी ने शिक्षा का क्या उद्देश्य बताया?

(ग) गाँधीजी की सोच भारतीय परम्परानुसार है, कैसे?

अपठित पद्यांश

पाठ 2

निम्नलिखित काव्यांश को पढ़कर उसके नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(1)

चाह नहीं, मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ
चाह नहीं, सम्राटों के शव पर
हे हरि! डाला जाऊँ
चाह नहीं; देवों के सिर पर
चढ़ूँ, भाग्य पर इठलाऊँ
मुझे तोड़ लेना बनमाली
उस पथ पर तुम देना फेंक
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने
जिस पथ पर जाएँ वीर अनेक।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित शब्द 'इठलाऊँ' का अर्थ बताइए।
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'पुष्प की अभिलाषा।'
(ख) इठलाऊँ का शाब्दिक अर्थ है—इतराऊँ/इतराना।
(ग) पुष्प की अभिलाषा है कि न तो वह सौन्दर्य-सामग्री के रूप में काम आना चाहता है, न वह सम्राटों के शव पर चढ़ना चाहता है, न ही देवों के मस्तक पर। अपितु वह देश के प्रति न्यौछावर होने वाले वीरों के पथ पर बिछना चाहता है। पुष्प की यह उत्कट अभिलाषा ही काव्यांश की मूल संवेदना है।

(2)

पंचवटी की छाया में है, सुन्दर पर्ण-कुटीर बना।
उसके सम्मुख स्वच्छ शिला पर, धीर, वीर, निर्भीक मना॥
जाग रहा वह कौन धनुर्धर, जबकि भुवन भर सोता है?
भोगी कुसुमायुध योगी-सा बना दृष्टिगत होता है॥
किस व्रत में है व्रती वीर यह, निद्रा का यों त्याग किए।
राजभोग के योग्य विपिन में, बैठा आज विराग लिए॥
बना हुआ है प्रहरी जिसका, उस कुटीर में क्या धन है।
जिसकी रक्षा में रत इसका तन है, मन है, जीवन है॥
मर्त्यलोक मालिन्य मेटने, स्वामी संग जो आई है।

तीन लोक की लक्ष्मी ने यह, कुटी आज अपनाई है॥
वीर वंश की लाज यही है, फिर क्यों वीर न हो प्रहरी।
विजन देश है निशा शेष है, निशाचरी माया ठहरी॥

प्रश्न—(क) उपर्युक्त काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित शब्द 'तीन लोक की लक्ष्मी' किसे कहा है?
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

उत्तर—(क) उपर्युक्त काव्यांश का उचित शीर्षक–'पंचवटी'।
(ख) तीन लोक की लक्ष्मी सीताजी को कहा गया है।
(ग) कवि का कहना है कि पंचवटी के सामने कामदेव के समान सुंदर राजभोग के योग्य पुरुष लक्ष्मण योगी के समान दिन-रात जागकर रखवाली कर रहा है क्योंकि यहाँ तीन लोक की लक्ष्मी पृथ्वी के दुःखों को दूर कराने के लिए सीताजी अपने प्रति भगवान श्रीराम के साथ यहाँ आई हैं।

(3)

अरुण यह मधुमय देश हमारा।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।
सरस तामरस गर्भ विभा पर-नाच रही तरु शिखा मनोहर।
छिटका जीवन हरियाली पर-मंगल कुंकुम सारा।
लघु सुरधनु से पंख पसारे-शीतल मलय समीर सहारे।
उड़ते खग जिस ओर मुँह किये-समझ नीड़ निज प्यारा।
बरसाती आँखों के बादल-बनते जहाँ भरे करुणा जल।
लहरें टकराती अनंत की-पाकर जहाँ किनारा।
हेम-कुंभ ले उषा सवेरे-भरती ढुलकाती सुख मेरे।
मदिर ऊँघते रहते-जब-जगकर रजनी भर तारा।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित शब्द 'नीड़ निज प्यारा' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक – 'मधुमय देश हमारा।'
(ख) रेखांकित शब्द नीड़ निज प्यारा का अर्थ है—हमारा प्यारा भारतवर्ष।
(ग) भारत सबके प्रति मधुर व्यवहार करने वालों का देश है। यहाँ अपरिचित विदेशियों को भी सहारा मिलता है। भारत की प्रकृति अत्यन्त मनोहर है। मनुष्य ही नहीं पक्षी भी इस देश को अपना निवास मानकर प्यार करते हैं। भारत में बादल करुणा का जल बरसाते हैं। यहाँ का प्रभातकालीन सौन्दर्य अनुपम होता है।

(4)

उदयाचल से किरन-धेनुएँ हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।
पूँछ उठाये चली आ रही क्षितिज-जंगलों से टोली
दिखा रहे पथ इस भू का सारस सुना-सुनाकर बोली
गिरता जाता फेन मुखों से नभ में बादल बन तिरता

किरन-धेनुओं का समूह यह आया अंधकार चरता।
नभ की अभ्र छाँह में बैठा बजा रहा बंशी रखवाला।
ग्वालिन सी ले दूब मधुर वसुधा हँस-हँस गले मिली
चमका अपने अपने स्वर्ण-सींग वे अब शैलों से उतर चलीं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) काव्यांश में रेखांकित शब्द 'प्रभात का ग्वाला' का क्या अभिप्राय है?

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'प्रभात का ग्वाला'।

(ख) प्रभात का ग्वाला यहाँ प्रातःकालीन सौन्दर्य के लिए प्रयुक्त हुआ है।

(ग) यहाँ कवि ने प्रभातकालीन सौन्दर्य का एक रूपक प्रस्तुत किया है। उसने प्रभात को एक ग्वाला बताया है। ग्वाले के आगे गायें चला करती हैं, उसी प्रकार प्रभात के आगे उसकी किरणें चल रही हैं। आकाश में तैरते बादलों को कवि ने गायों के मुँह से गिरता हुआ फेन माना है। प्रभात आम के वृक्ष की छाया में बैठकर वंशी बजाने वाले ग्वाले की तरह लग रहा है।

(5)

उठे राष्ट्र तेरे कन्धों पर, बढ़े प्रगति के प्रांगण में।
पृथ्वी को रख दिया उठाकर, तूने नभ के आँगन में॥
तेरे प्राणों के ज्वारों पर, लहराते हैं देश सभी।
चाहे जिसे इधर कर दे तू, चाहे जिसे उधर क्षण में॥
मत झुक जाओ देख प्रभंजन, गिरि को देख न रुक जाओ।
और न जम्बुक-से मृगेन्द्र को, देख सहम कर लुक जाओ।।
झुकना, रुकना, लुकना, ये सब कायर की सी बातें हैं।
बस तुम वीरों से निज को बढ़ने को उत्सुक पाओ॥
अपनी अविचल गति से चलकर नियतिचक्र की गति बदलो।
बढ़े चलो बस बढ़े चलो, हे युवक ! निरन्तर बढ़े चलो॥
देश-धर्म-मर्यादा की रक्षा का तुम व्रत ले लो।
बढ़े चलो, तुम बढ़े चलो, हे युवक ! तुम अब बढ़े चलो॥

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) रेखांकित शब्द 'मृगेन्द्र' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'देश के पराक्रमी नवयुवक।'

(ख) मृगेन्द्र का अर्थ यहाँ 'शेर' है।

(ग) युवकों की शक्ति से ही मातृभूमि का विकास और उत्थान होता है। उनके ही श्रम से वह उन्नति के शिखर पर चढ़ती है। कायर मनुष्य शत्रु के सामने झुक जाता है। पराक्रमी मनुष्य भाग्यवादी नहीं होता, वह दृढ़ता से अपने कर्तव्य-पथ पर बढ़ता है तथा भाग्य के अवरोधों को भी हटा देता है।

(6)

इस समाधि में छिपी हुई है, एक राख की ढेरी।
जलकर जिसने स्वतंत्रता की दिव्य आरती फेरी॥
यह समाधि एक लघु समाधि है, झाँसी की रानी की।
अन्तिम लीला-स्थली यही है, लक्ष्मी मरदानी की॥
यहीं कहीं पर बिखर गई वह, भग्न विजयमाला सी।
उसके फूल यहाँ संचित हैं, है यह स्मृतिशाला सी॥
सहे वार पर वार अन्त तक, बढ़ी वीर बाला सी।
आहुति सी गिर पड़ी चिता पर, चमक उठी ज्वाला सी॥
बढ़ जाता है मान वीर का, रण में बलि होने से।
मूल्यवती होती सोने की, भस्म यथा सोने से॥
रानी से भी अधिक हमें अब, यह समाधि है प्यारी।
यहाँ निहित है स्वतंत्रता की, आशा की चिनगारी॥
इससे भी सुन्दर समाधियाँ, हम जग में हैं पाते।
उनकी गाथा पर निशीथ में, क्षुद्र जन्तु ही गाते॥

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) ''उसके फूल यहाँ संचित हैं'' – यहाँ फूल से क्या तात्पर्य है?
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक– 'झाँसी की रानी की समाधि'।
(ख) यहाँ फूल संचित हैं से तात्पर्य है– चिता के शांत हो जाने पर उससे चुनी गई अस्थियाँ या रानी के अवशेष।
(ग) रानी ने स्वतंत्रता के लिए संग्राम करते हुए अपना बलिदान किया था। उसके स्वतंत्रता के संदेश के पूरा होने की आशा अब इस समाधि पर ही है। इसी से स्वतंत्रता की प्रेरणा मिलेगी। इसी कारण यह समाधि रानी से अधिक प्रिय हो गई है।

(7)

सबसे विराट जनतंत्र जगत का आ पहुँचा,
तैंतीस कोटि हित सिंहासन तैयार करो,
अभिषेक आज राजा का नहीं, प्रजा का है,
तैंतीस कोटि जनता के सिर पर मुकुट धरो।
आरती लिए तू किसे ढूँढ़ता है मूरख दो राह,
मंदिरों, राजप्रासादों में, तहखानों में?
देवता कहीं सड़कों पर मिट्टी तोड़ रहे,
देवता मिलेंगे खेतों में, खलिहानों में।
फावड़े और हल राजदण्ड बनने को हैं,
धूसरता सोने से श्रृंगार सजाती है;
समय के रथ का घर्घर-नाद सुनो,
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) "तैंतीस कोटि" से क्या तात्पर्य है?
(ग) उपर्युक्त काव्यांश का मूल संदेश समझाइए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'जनतंत्र की महत्ता'।

(ख) तैंतीस कोटि से आशय भारतीय जनता है।

(ग) देवता मंदिरों में और राजमहलों में नहीं रहते। जनतंत्र के देवता किसान-मजदूर होते हैं। वे खेतों में और कारखानों में ही मिलते हैं। उनको वहीं पर देखा जा सकता है। भारत के ये करोड़ों-करोड़ लोग ही भारतीय जनतंत्र के सच्चे शासक हैं। कवि उनको सत्ता का अधिकार सौंपने का संदेश दे रहा है।

(8)

शब्दों की दुनिया में मैंने हिन्दी के बल अलख जगाये।
जैसे दीप-शिखा के बिरवे कोई ठण्डी रात बिताये।
जो कुछ हूँ हिन्दी से हूँ मैं जो हो लूँ हिन्दी से हो लूँ।
हिन्दी सहज क्रान्ति की भाषा यह विप्लव की अकथ कहानी।
मैकॉले पर भारतेन्दु की अमर विजय की अमिट निशानी।।
शेष गुलामी के दागों को जब धो लूँ हिन्दी में धो लूँ।।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) हिन्दी के बल पर अलख का तात्पर्य स्पष्ट कीजिए।

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'स्वाधीन भारत की भाषा हिन्दी'।

(ख) 'हिन्दी के बल पर अलख' से आशय है—हिन्दी के शब्दों का प्रयोग करके कवि ने प्रेरणाप्रद भाषा में नवजागरण का संदेश दिया है।

(ग) हिन्दी के अनेक कवियों ने अंग्रेजी शासन से मुक्ति का संदेश भारतीयों को दिया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने मैकॉले की नीति का विरोध हिन्दी में ही किया था। भारत के अनेक क्रान्तिकारियों ने हिन्दी में क्रान्ति का संदेश दिया है। भारत आज स्वतंत्र हो चुका है किन्तु अब भी परतंत्रता के कुछ चिह्न बचे हुए हैं। भारत में अब भी अंग्रेजी भाषा का प्रभाव बना हुआ है। कवि इन गुलामी के दागों को हिन्दी का प्रयोग करके धो डालना चाहता है।

(9)

यह सच है तो अब लौट चलो तुम घर को।
चौंके सब सुनकर अटल कैकेयी-स्वर को।
सब ने रानी की ओर अचानक देखा,
वैधव्य-तृषारावृता तथापि विधु-लेखा।
बैठी थी अचल तथापि असंख्य तरंगा,
वह सिंही अब थी हहा। गौमुखी गंगा—
हाँ जनकर भी मैंने न भरत को जाना,
सब सुन लें तुमने स्वयं अभी यह माना।
यह सच है तो फिर लौट चलो घर भैया,
अपराधिन मैं हूँ तात, तुम्हारी मैया।
दुर्बलता का ही चिह्न विशेष शपथ है,
पर अबला जन के लिए कौन-सा पथ है?

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) रेखांकित शब्द विधु-लेखा से क्या आशय है?

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'रानी कैकेयी का पश्चात्ताप।'

(ख) विधु-लेखा से आशय चन्द्रमा की चाँदनी से है।

(ग) सभा में रानी कैकेयी तेजहीन दिखाई दे रही थी। रानी कैकेयी ने राम से कहा—मैं जन्म देकर भी भरत को जान न सकी। अत: मुझसे तुम्हारे अधिकार के हनन का पाप हो गया। तुम मान चुके हो कि दोष भरत का नहीं है। अत: अब तुम अयोध्या लौट चलो। कैकेयी के ये स्वर सुनकर सभा में उपस्थित सभी लोग चौंक पड़े।

(10)

अरे चाटते जूठे पत्ते जिस दिन मैंने देखा नर को
उस दिन सोचा: क्यों न लगा दूँ आज आग इस दुनिया-भर को?
यह भी सोचा: क्यों न टेंटुआ घोंटा जाय स्वयं जगपति का?
जिसने अपने ही स्वरूप को दिया रूप इस घृणित विकृति का।
जगपति कहाँ? अरे, सदियों से वह तो हुआ राख की ढेरी;
वरना समता-संस्थापन में लग जाती क्या इतनी देरी?
छोड़ आसरा अलख शक्ति का; रे नर, स्वयं जगपति तू है,
तू यदि जूठे पत्ते चाटे, तो तुझ पर लानत है, थू है।
ओ भिखमँगे, अरे पराजित, ओ मज़लूम, अरे चिरदोहित,
तू अखंड भंडार शक्ति का; जाग अरे निद्रा-सम्मोहित,
प्राणों को तड़पाने वाली हुंकारों से जल-थल भर दे।
अनाचार के अंबारों में अपना ज्वलित पलीता भर दे।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का शीर्षक लिखिए।

(ख) 'स्वयं' जगपति तू है' का क्या तात्पर्य है?

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवदेना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'सामाजिक शोषण के प्रति विद्रोह।'

(ख) कवि ने मानव को 'स्वयं जगपति तू है' कहकर इस संसार का स्वामी बताया है।

(ग) जूठे पत्ते चाटना देश की भीषण दुर्दशा को व्यक्त करता है। इससे पता चलता है कि समाज में मानव-मानव में असमानता है। एक ओर सम्पन्नता है तो दूसरे ओर भीषण गरीबी है। कवि कहता है कि मनुष्य असीम शक्ति का स्वामी है। वह अपनी क्षमता को पहचानकर इस अनाचार को खत्म करके समता की स्थापना करे।

(11)

चिलचिलाती धूप को जो चाँदनी देवे बना।
काम पड़ने पर करे जो शेर का भी सामना ॥
जो कि हँस-हँस के चबा लेते हैं लोहे का चना।
है कठिन कुछ भी नहीं जिनके है जी में यह ठना ॥
कोस कितने ही चलें पर वे कभी थकते नहीं।
कौन-सी है गाँठ जिसको खोल वे सकते नहीं ॥

संकटों से वीर घबराते नहीं, आपदायें देख छिप जाते नहीं।
लग गये जिस काम में पूरा किया, काम करके व्यर्थ पछताते नहीं ॥
हो सरल या कठिन हो रास्ता, कर्मवीरों को न इससे वास्ता।
बढ़ चले तो अंत तक ही बढ़ चले, कठिनतर गिरिश्रृंग ऊपर चढ़ चले ॥

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उपयुक्त शीर्षक लिखिए।

(ख) रेखांकित पंक्ति का क्या अर्थ है?

(ग) काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक — 'कर्मवीर।'

(ख) कर्मवीर मार्ग की कठिनाइयों से नहीं डरते। वे सदा कठिन श्रम करते हैं तथा अपने परिश्रम से रास्ते की बाधाओं को भी दूर कर देते हैं।

(ग) प्रस्तुत काव्यांश में कवि ने उन मनुष्यों का वर्णन किया है जो सदा काम में लगे रहते हैं। वे अपने कठिन परिश्रम से रास्ते की कठिनाइयों को हटा देते हैं। वे कठिन से कठिन काम करने से भी पीछे नहीं हटते। वे जिस काम को करने का निश्चय करते हैं उसे पूरा करके ही मानते हैं।

(12)

आओ मिलें सब देश बंधव हार बनकर देश के
साधक बनें सब प्रेम से सुख शांतिमय उद्देश्य के।
क्या साम्प्रदायिक भेद से है ऐक्य मिट सकता अहो?
बनती नहीं क्या एक माला विविध सुमनों की कहो।
रक्खो परस्पर मेल, मन से छोड़कर अविवेकता,
मन का मिलन ही मिलन है, होती उसी से एकता।
सब बैर और विरोध का बल-बोध से वारण करो।
है भिन्नता में खिन्नता ही, एकता धारण करो।
है कार्य ऐसा कौन-सा साधे न जिसको एकता,
देती नहीं अद्‌भुत अलौकिक शक्ति किसको एकता।
दो एक एकादश हुए किसने नहीं देखे सुने,
हाँ, शून्य के भी योग से हैं अंक होते दश गुने।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) रेखांकित पंक्ति 'दो एक एकादश हुए' से कवि का क्या आशय है?

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संदेश स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक —'अनेकता में एकता।'

(ख) एक और एक संख्याओं के मिलने से एक की शक्ति अनेक गुना बढ़ जाती है, उसी प्रकार विभिन्न संस्कृतियों के मिलने से भारत की शक्ति में भी वृद्धि हो जाती है।

(ग) भारत की साम्प्रदायिक विविधता एक ऐसी माला है, जो अनेक प्रकार के फूलों को मिलाकर बनती है। वैसे ही भारत में अनेक धर्मों, जातियों, वर्णों और विचार वाले लोग रहते हैं। हमें विविधताओं को धारण करते हुए एकता बनाए रखनी चाहिए, यही काव्यांश का मूल संदेश है।

(13)

क्षमा शोभती उस भुजंग को
जिसके पास गरल हो,
उसको क्या, जो दन्तहीन
विषहीन विनीत सरल हो।
तीन दिवस तक पंथ माँगते
रघुपति सिन्धु किनारे,
बैठे पढ़ते रहे छन्द
अनुनय के प्यारे-प्यारे।
उत्तर में जब एक नाद भी
उठा नहीं सागर से,
उठी अधीर धधक पौरुष की
आग राम के शर से।
सिन्धु देह धर 'त्राहि-त्राहि'
करता आ गिरा शरण में,
चरण पूज, दासता ग्रहण की
बँधा मूढ़ बन्धन में।
सच पूछो तो शर में ही
बसती है दीप्ति विनय की,
सन्धि-वचन संपूज्य उसी का
जिसमें शक्ति विजय की।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित शब्द का अर्थ लिखिए।
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'शक्तिशाली का क्षमादान।'
(ख) संधि वचन का अर्थ 'समझौते की बातें' हैं।
(ग) सेना सहित समुद्र के पार स्थित लंका जाने के लिए समुद्र द्वारा मार्ग न देने पर राम को क्रोध आ गया और उन्होंने अपने धनुष पर बाण चढ़ाकर समुद्र को सुखाना चाहा तो भयभीत होकर समुद्र मानव रूप में उनके चरणों में आ गिरा। कवि का कहना है कि समझौता तभी सफल होता है, जब समझौता करने वाला व्यक्ति शक्तिशाली होता है तथा विरोधी को युद्ध में परास्त करने की शक्ति रखता है।

(14)

आज की दुनियाँ विचित्र नवीन,
प्रकृति पर सर्वत्र है विजयी पुरुष आसीन।
हैं बँधे नर के करों में वारि, विद्युत, भाप,
हुक्म पर चढ़ता उतरता है पवन का ताप
है नहीं बाकी कहीं व्यवधान,
लाँघ सकता नर सरित्, गिरि, सिन्धु एक समान।
शीश पर आदेश कर अवधार्य
प्रकृति के सब तत्व करते हैं मनुज के कार्य,
मानते हैं हुक्म मानव का महा वरुणेश,
और करता शब्दगुण अम्बर वहन सन्देश।
नव्य नर की मुष्टि में विकराल,
हैं सिमटते जा रहे दिक्काल।
यह प्रगति निस्सीम ! नर का यह अपूर्व विकास।
चरण तल भूगोल! मुट्ठी में निखिल आकाश।
किन्तु है बढ़ता गया मस्तिष्क ही नि:शेष,
छूटकर पीछे गया है रह हृदय का देश;
नर मनाता नित्य नूतन बुद्धि का त्यौहार,
प्राण में करते दु:खी हो देवता चीत्कार।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) 'हृदय का देश' का अर्थ क्या है?
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'विज्ञान और मनुष्य।'
(ख) हृदय का देश शब्द का आशय मन के संसार से है।

(ग) आज मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त कर चुका है। जल, बिजली और भाप की शक्ति पर उसका अधिकार हो चुका है। वह अपनी इच्छा से (बिजली के यंत्रों द्वारा) हवा को गरम या ठंडा कर सकता है। विज्ञान के कारण मनुष्य ने बुद्धि के क्षेत्र में असीम प्रगति की है। इस बौद्धिक दौड़ में हृदय या मन का संसार कहीं पीछे छूट गया है अर्थात् मनुष्य के प्रति मनुष्य की सहानुभूति, सद्भाव तथा प्रेम आज उपेक्षित हो गए हैं।

(15)

यह बुरा है या कि अच्छा, व्यर्थ दिन इस पर बिताना,
जब असम्भव छोड़ यह पथ दूसरे पर पग बढ़ाना,
तू इसे अच्छा समझ, यात्रा सरल इससे बनेगी,
सोच मत केवल तुझे ही यह पड़ा मन में बिठाना,
हर सफल पंथी यही विश्वास ले इस पर बढ़ा है,
तू इसी पर आज अपने चित्त का अवधान कर ले;
पूर्व चलने के, बटोही, बाट की पहचान कर ले।
कौन कहता है कि स्वप्नों को न आने दे हृदय में,
देखते सब हैं इन्हें अपनी उमर, अपने समय में,
और तू कर यत्न भी तो मिल नहीं सकती सफलता,
ये उदय होते लिए कुछ ध्येय नयनों के निलय,
किन्तु जग के पन्थ पर यदि स्वप्न दो तो सत्य दो, सौ,
स्वप्न पर ही मुग्ध मत हो, सत्य का भी ज्ञान कर ले;
पूर्व चलने के, <u>बटोही, बाट</u> की पहचान कर ले।
स्वप्न आता स्वर्ग का, दृग-कोरकों में दीप्ति आती,
पंख लग जाते पगों को, ललकती उन्मुक्त छाती,
रास्ते का एक काँटा पाँव का दिल चीर देता,
रक्त की दो बूँद गिरतीं, एक दुनिया डूब जाती,
'आँख में हो स्वर्ग लेकिन पाँव पृथ्वी पर टिके हों',
कंटकों की इस अनोखी सीख का सम्मान कर ले;
पूर्व चलने के, बटोही, बाट की पहचान कर ले।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित शब्दों का अर्थ लिखिए।
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'स्वप्न और सत्य।'
(ख) बटोही का अर्थ यात्री (पथिक) है तथा बाट का अर्थ रास्ता (मार्ग) है।
(ग) कवि का कहना है कि हम अपने लिए जो मार्ग तय करें उसी को अच्छा समझें तथा उस पर दृढ़ता से चलते रहें। जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए दृढ़ निश्चयी होना जरूरी होता है। जीवन में सफलता पाने के मार्ग में अनेक बाधाएँ आती हैं। उनका ठीक ज्ञान होने पर ही उनसे बचकर सफलता के मार्ग पर आगे बढ़ा जा सकता है।

(16)

जग में सचर-अचर जितने हैं, सारे कर्म निरत हैं।
धुन है एक-न-एक सभी को, सबके निश्चित व्रत हैं।।
जीवन-भर आतप सह वसुधा पर छाया करता है।
तुच्छ पत्र की भी स्वकर्म में कैसी तत्परता है।।
जिस पर गिरकर उदर-दरी से तुमने जन्म लिया है।
जिसका खाकर अन्न, सुधा-सम नीर, समीर पिया है।।
वह स्नेह की मूर्ति दयामयी माता तुल्य मही है।
उसके प्रति कर्त्तव्य तुम्हारा क्या कुछ शेष नहीं है?
केवल अपने लिये सोचते, मौज भरे गाते हो।

पीते, खाते, सोते, जगते, हँसते, सुख पाते हो।।
जग से दूर स्वार्थ-साधन ही सतत तुम्हारा यश है।
सोचो, तुम्हीं, कौन अग-जग में तुम-सा स्वार्थ विवश है?
पैदा कर जिस देशजाति ने तुमको पाला-पोसा।
किये हुये है वह निज-हित का तुमपे बड़ा भरोसा।।
उससे होना उऋण प्रथम है सत्कर्त्तव्य तुम्हारा।
फिर दे सकते हो वसुधा को शेष स्वजीवन सारा।।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक दीजिए।
(ख) 'सुधा-सम नीर' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
(ग) प्रस्तुत काव्यांश से क्या प्रेरणा मिलती है? लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'कर्त्तव्यनिष्ठ जीवन।'
(ख) सुधा सम नीर से आशय है—मातृभूमि का पानी अमृत के समान है।
(ग) इस संसार में सभी लोग किसी न किसी काम में लगे हैं। सब किसी न किसी लक्ष्य को सामने रखकर अपने जीवन में आगे बढ़ रहे हैं। कवि ने देश-जाति की सेवा करने की प्रेरणा दी है। देश-जाति का भारी ऋण हमारे ऊपर है। उसी ने हमको पैदा किया तथा पाल-पोषकर बड़ा किया है। उसका ऋण चुकाना है हमारा सत्कर्त्तव्य है।

(17)

सी-सी कर हेमंत कँपे, तरु झरे, खिले वन !
औ' जब फिर से गाढ़ी ऊदी लालसा लिये,
गहरे कजरारे बादल बरसे धरती पर,
मैंने, कौतूहल वश, आँगन के कोने की
गीली तह को यों ही उँगली से सहलाकर
बीज सेम के दबा दिये मिट्टी के नीचे !
भू के अंचल में मणि माणिक बाँध दिये हों !
आह, समय पर उनमें कितनी फलियाँ टूटीं !
कितनी सारी फलियाँ, कितनी प्यारी फलियाँ,
यह धरती कितना देती है! धरती माता
कितना देती है अपने प्यारे पुत्रों को !
नहीं समझ पाया था मैं उसके महत्त्व को !
बचपन में छिः, स्वार्थ लोभ वश पैसे बोकर !
रत्न प्रसविनी है वसुधा, अब समझ सका हूँ !
इसमें सच्ची समता के दाने बोने हैं,
इसमें जन की क्षमता के दाने बोने हैं,
इसमें मानव ममता के दाने बोने हैं,
जिससे उगल सके फिर धूल सुनहली फसलें
मानवता की—जीवन श्रम से हँसें दिशाएँ।
हम जैसा बोएँगे वैसा ही पायेंगे।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) 'सी-सी कर .... धरती पर' —इन पंक्तियों में कवि ने किस ऋतु का वर्णन किया है?
(ग) कवि ने काव्यांश में क्या प्रेरणा दी है?

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'रत्न प्रसविनी धरती।'
(ख) 'सी-सी कर......धरती पर 'पंक्तियों' में कवि ने शीतऋतु, पतझड़, वसन्त तथा वर्षा ऋतुओं का वर्णन किया है।
(ग) कवि ने हमें प्रेरणा दी है कि हम धरती पर मानव-मानव के बीच सच्ची समानता और प्रेम की फसल उगाएँ। हम मानव की सक्षमता के बीज बोएँ। धरती पर हम बैर-घृणा के स्थान पर प्रेम पैदा करेंगे तो पूरी पृथ्वी मानव-प्रेम से भर जायेगी।

(18)

हिमालय के आँगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार।
उषा ने हँस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक हार।
जब हम लगे जगाने विश्व लोक में फैला फिर आलोक।
तम-पुंज हुआ तब नष्ट, अखिल संसृति हो उठी अशोक।
विमल वाणी ने वीणा ली कमल कोमल कर में सप्रीत।
सप्तस्वर सप्तसिंधु में उठे, छिड़ा तब मधुर साम-संगीत।
बचाकर बीज रूप से सृष्टि, नाव पर झेल प्रलय की शीत।
अरुण केतन लेकर निज हाथ वरुण-पथ में हम बढ़े अभीत।
सुना है दधीचि का वह त्याग हमारा जातीयता विकास।
पुरंदर ने पवि से है लिखा, अस्थि-युग का मेरा इतिहास।
विजय केवल लोहे की नहीं, धर्म की रही धरा पर धूम।
भिक्षु होकर रहते सम्राट दया दिखलाते घर-घर घूम।
यवन को दिया दया का दान, चीन को मिली धर्म की दृष्टि।
मिला था स्वर्ण-भूमि को रत्न, शील की सिंहल को भी सृष्टि।
किसी का हमने छीना नहीं, प्रकृति का रहा पालना यहीं।
हमारी जन्मभूमि थी यही, कहीं से हम आये थे नहीं।

प्रश्न—(क) काव्यांश हेतु एक उपयुक्त शीर्षक दीजिये।
(ख) रेखांकित पंक्ति में किसके अपूर्व त्याग की ओर संकेत है?
(ग) उपर्युक्त काव्यांश में कवि ने किस पूर्वाग्रह का खंडन किया है? लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक— 'हमारा भारतवर्ष।'
(ख) इस पंक्ति में देवराज की सफलता के लिए प्राण त्यागने वाली दधीचि के अपूर्व त्याग की ओर संकेत है।
(ग) कवि ने बताया है कि भारत हमारा आदि देश है। हमारे पूर्वज सदा से यहीं रहते आये हैं। आर्य भारत में बाहर से आकर बसे थे— इतिहास में पढ़ाये जाने वाले विदेशी इतिहासकारों के इस कथन का कवि ने स्पष्ट शब्दों में खंडन किया है।

(19)

प्रकृति नहीं डरकर झुकती है कभी भाग्य के बल से,
सदा हारती वह मनुष्य के उद्यम से; श्रमजल से।
ब्रह्म का अभिलेख पढ़ा करते निरुद्यमी प्राणी,
धोते वीर कु-अंक भाल का बहा भ्रुवों से पानी
भाग्यवाद आवरण पाप का और शस्त्र शोषण का,
जिससे रखता दबा एक जन भाग दूसरे जन का।
पूछो किसी भाग्यवादी से, यदि विधि-अंक प्रबल है,
क्यों न उठा लेता निज संचित कोष भाग्य के बल से?

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) प्रकृति किससे नहीं डरती?

(ग) 'ब्रह्मा का अभिलेख' क्या है? उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'मानव जीवन में श्रम की महत्ता।'

(ख) प्रकृति भाग्य की शक्ति से नहीं डरती।

(ग) भाग्य को ब्रह्मा का अभिलेख कहा गया है। कायर और श्रम से डरने वाले लोग ही इसको पढ़ते हैं और भाग्य-भाग्य चिल्लाते हैं। चालाक लोग भोले-भालेजनों का शोषण यह कहकर करते हैं कि निर्धनता और अभाव उनके भाग्य में लिखा है। लेकिन कवि का कहना है कि पराक्रमी मनुष्य श्रम बल से भाग्य को जीत लेता है। दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदल देता है।

(20)

नीलांबर परिधान हरित पट सुंदर है, सूर्य चन्द्र युग मुकुट, मेखला रत्नाकर है।
नदियाँ प्रेम प्रवाह, फूल तारे मंडन हैं, बंदीजन खग-वृंद, शेषफन सिंहासन हैं।
करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेश की, है मातृभूमि तू सत्य ही, सगुण मूर्ति सर्वेश की।
जिसकी रज में लोट-लोट कर बड़े हुए हैं, घुटनों के बल सरक-सरक कर खड़े हुए हैं।
परमहंस सम बाल्य काल में सब सुख पाए, जिसके कारण धूल भरे हीरे कहलाए।
हम खेले कूदे हर्षयुत, जिसकी प्यारी गोद में, हे मातृभूमि तुझको निरख, मग्न क्यों न हो गोद में।
पाकर तुझसे सभी सुखों को हमने भोगा, तेरा <u>प्रत्युपकार</u> कभी क्या हमसे होगा?
तेरी ही यह देह तुझी से बनी हुई है, बस तेरे ही सरस सार से सनी हुई है।
फिर अंत समय तू ही इसे अचल देख अपनाएगी, हे मातृभूमि यह अंत में, तुझमें ही मिल जाएगी।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ग) रेखांकित शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'मातृभूमि के उपकार।'

(ख) उपकार का बदला प्रति उपकार करके देना प्रत्युपकार का अर्थ है।

(ग) कवि बचपन से ही मातृभूमि की धूल में खेलकर बड़ा और समर्थ हुआ है। वह आज जो कुछ है, वह मातृभूमि के कारण ही है। अपनी उपलब्धियों के कारण मातृभूमि के दर्शन करने से उसे प्रसन्नता होती है। मनुष्य का शरीर मातृभूमि की मिट्टी से ही बनता है और अन्त में राख होकर इसी की मिट्टी में मिल जाता है। मानव देह का मातृभूमि से अटूट सम्बन्ध है।

(21)

पावस ऋतु थी पर्वत प्रदेश,
पल पल परिवर्तित प्रकृति वेश।
मेखलाकार पर्वत अपार
अपने सहस्र दृग सुमन फाड़,
अवलोक रहा है बार बार
नीचे जल में निज महाकार,
जिसके चरणों में पड़ा ताल
दर्पण सा फैला है विशाल

गिरि के गौरव गाकर झर-झर
मद में नस-नस उत्तेजित कर
मोती की लड़ियों से सुंदर
झरते हैं झाग भरे निर्झर।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(घ) रेखांकित पंक्तियों का भावार्थ लिखिए।
(ग) उपर्युक्त पद्यांश का आशय लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'पर्वत-प्रदेश में वर्षा ऋतु।'
(ख) कवि कहता है कि झरने अपने झागों से भरे जल के साथ पहाड़ से नीचे झरते हैं तो ऐसा लगता है मानो वे मोतियों की लड़ियों से बनी सुंदर मालाएँ हों।
(ग) कवि ने पर्वतों में वर्षा ऋतु का वर्णन करते हुए कटा है कि पर्वत का आकार मेखलाकार है। वह अपने हजार नेत्रों से नीचे फैले जल की परछाईं में अपने महान् आकार को देख रहा है। पर्वत के चरणों में विशाल तालाब जल से भरा हुआ लहरा रहा है, जो पर्वत से बहने वाले झरनों से ही बना है। इन झरनों से गिरता हुआ पानी मोती की लड़ियों के समान लगता है।

(22)

मैं मजदूर मुझे देवों की बस्ती से क्या? अगणित बार धरा पर मैंने स्वर्ग बनाए।
अपने नहीं अभाव मिटा पाया जीवन भर, पर औरों के सभी अभाव मिटा सकता हूँ।
तूफानों-भूचालों की भयप्रद छाया में, मैं ही एक अकेला हूँ जो गा सकता हूँ।
मेरे 'मैं' की संज्ञा भी कितना व्यापक है, इसमें मुझसे अगणित प्राणी आ जाते हैं।
मुझको अपने पर अदम्य विश्वास रहा है, अपने पर अदम्य विश्वास रहा है
मैं खण्डहर को फिर से महल बना सकता हूँ, जब-जब भी मैंने खण्डर आबाद किए हैं
प्रलय-मेघ, भूचाल देख मुझको शरमाए, मैं मजदूर मुझे देवों की बस्ती से क्या?

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) 'मैं' शब्द से क्या तात्पर्य है?
(ग) काव्यांश में मजदूर और धनवान लोगों की क्या विशेषताएँ प्रकट होती हैं?

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'मैं मजदूर हूँ।'
(ख) 'मैं' शब्द का प्रयोग मजदूर ने अपने लिए किया है। इस शब्द में संसार के समस्त मजदूर सम्मिलित हैं।
(घ) मजदूर पृथ्वी पर स्वर्ग का निर्माण करता है। वह अपने परिश्रम से पृथ्वी को स्वर्ग के समान सुन्दर और सुखद बना देता है। मजदूर की श्रमशीलता तथा निर्धनता प्रकट होती है, तो दूसरी ओर धनवान् लोगों की दूसरों का शोषण करके ऐशो-आराम का जीवन जीने की प्रवृत्ति प्रकट होती है।

(23)

आजानु-बाहु ऊँची करके, वे बोले, "रक्त मुझे देना।
इसके बदले में भारत की आजादी तुम मुझसे लेना।
हो गई सभा में उथल-पुथल, सीने में दिल न समाते थे।

स्वर इन्कलाब के नारों के कोसों तक छाए जाते थे।
"हम देंगे-देंगे खून" शब्द बस यही सुनाई देते थे।
रण में जाने को युवक खड़े तैयार दिखाई देते थे।
बोले सुभाष, "इस तरह नहीं, बातों से मतलब सरता है।
लो, यह कागज है, कौन यहाँ आकर हस्ताक्षर करता है?
अब आगे आए, जिसके तन में भारतीय खूँ बहता हो।
वह आगे आए जो अपने को हिन्दुस्तानी कहता हो।
वह आगे आए, जो इस पर खूनी हस्ताक्षर देता हो
मैं कफन बढ़ाता हूँ आए जो इसको हँस कर लेता हो।"

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) सुभाष के कथन 'इस तरह नहीं बातों से मतलब सरता है' का क्या तात्पर्य है?
(ग) उपर्युक्त काव्यांश में सुभाष ने क्या आह्वान किया है?

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'सुभाष का आह्वान।'
(ख) सुभाष के इस कथन का आशय है कि देश को आजादी बातों से नहीं मिलेगी। उसके लिए बलिदान जरूरी है।
(ग) सुभाष ने कहा कि आप लोग भारत की आजादी चाहते हैं तो अपना खून देने को तैयार रहें। केवल बातें करने से आजादी नहीं मिलेगी, उसके लिए हमें अपने प्राणों का बलिदान करना पड़ेगा। सुभाष का आह्वान सुनकर अनेक लोग बलिदान के लिए तैयार हो गए थे।

(24)

ओ निराशा, तू बता क्या चाहती है?
मैं कठिन तूफान कितने झेल आया,
मैं रुदन के पास हँस-हँस खेल आया।
मृत्यु-सागर-तीर पर पद-चिह्न रखकर
मैं अमरता का नया संदेश लाया।
आज तू किसको डराना चाहती है।
ओ निराशा, तू बता क्या चाहती है?

शूल क्या देखूँ चरण जब उठ चुके हैं
हार कैसी, हौसले जब बढ़ चुके हैं।
तेज मेरी चाल आँधी क्या करेगी?
आग में मेरे मनोरथ तप चुके हैं।
आज तू किससे लिपटना चाहती है?

चाहता हूँ मैं कि नभ-थल को हिला दूँ,
और रस की धार सब जग को पिला दूँ,
चाहता हूँ पग प्रलय-गीत से मिलाकर-

आह की आवाज पर मैं आग रख दूँ।
आज तू किसको जलाना चाहती है?
ओ निराशा, तू बता क्या चाहती है?

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित शब्द का अर्थ लिखिए।
(ग) उपर्युक्त काव्यांश का संदेश लिखिए।

उत्तर—(क) काव्यांश का उचित शीर्षक—'दृढ़ निश्चयी पुरुष।'
(ख) नभ-थल से तात्पर्य-आकाश-पृथ्वी है।
(ग) मनुष्य निराशा से नहीं डरता। वह जीवन की कठिन परिस्थितियों से जूझकर मजबूत हो चुका है और उसके मन से निराशा की भावना मिट चुकी है। मनुष्य के मन में जब आगे बढ़ने की भावना मजबूत हो जाती है तो उसको हार का भय नहीं रहता। वह पक्के इरादों से साथ निरन्तर आगे बढ़ता है।

(25)

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो!
हैं फूल रोकते, काँटे मुझे चलाते,
मरुस्थल, पहाड़ चलने की चाह बढ़ाते,
सच कहता हूँ मुश्किलें न जब होती हैं,
मेरे पग तब चलने में भी शरमाते,
मेरे संग चलने लगें हवाएँ जिससे,
तुम पथ के कण-कण को तूफान करो।
मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो।
फूलों से मग आसान नहीं होता है,
रुकने से पग गतिवान नहीं होता है,
अवरोध नहीं तो सम्भव नहीं प्रगति भी,
है नाश जहाँ निर्माण वहीं होता है,
मैं बसा सकूँ नव स्वर्ग धरा पर जिससे,
तुम मेरी हर बस्ती वीरान करो।

प्रश्न—(क) पद्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) विनाश या निर्माण का परस्पर क्या सम्बन्ध है?
(ग) इस कविता की प्रेरणा क्या है?

उत्तर—(क) पद्यांश का उचित शीर्षक—'बाधाओं से संघर्ष करो।'
(ख) विनाश होने पर ही निर्माण होता है। विनाश के बाद ही निर्माण सम्भव है।
(ग) इस कविता की प्रेरणा है कि हमें जीवन में आने वाली बाधाओं से घबराना नहीं चाहिए, उनका दृढ़तापूर्वक मुकाबला करना चाहिए। मंजिल पाने में अनेक बाधाएँ हैं, लेकिन हमें अपनी अलौकिक शक्ति को पहचानकर मंजिल प्राप्त करनी चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

(नोट—नीचे दिए गए काव्यांशों को पढ़कर उनके साथ लिखे हुए प्रश्नों के उत्तर छात्र स्वयं लिखें।)

(1)

थका हारा सोचता मन, उलझती ही जा रही है एक उलझन।
अंधेरे में अंधेरे से कब तक लड़ते रहें, सामने जो दिख रहा है, वह सच्चाई भी कहें।
भीड़ अंधों की खड़ी खुश रेवड़ी खाती, अंधेरों के इशारों पर नाचती-गाती।
थका हारा सोचता मन, भूखी प्यासी कानाफूसी दे उठी दस्तक।
अंधा बन जा झुका दे तम-द्वार पर मस्तक, रेवड़ी की बाँट में तू रेवडी बन जा।
तिमिर के दरबार में दरबान-सा-तन जा, उठा गर्दन-जूझता मन।
दूर उलझन, दूर उलझन, दूर उलझन, चल खड़ा हो पैर में यदि लग गई ठोकर।
खड़ा हो संघर्ष में फिर रोशनी होकर, मृत्यु भी वरदान है संघर्ष में प्यारे।
सत्य के संघर्ष में क्यों रोशनी हारे, देखते ही देखते तम तोड़ता है दम।
और सूरज की तरह हम ठोंकते हैं खम।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) 'रेवड़ी की बाँट में तू रेवड़ी बन जा'—का क्या आशय है?
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

(2)

ईश्वर के बारे में, अनगिनती लोगों ने।
अनगिन तरीकों से बखाना है, उसको अपने ढंग से।
अपने-अपने रंग में अनुमाना है, मैंने जो कुछ बुजुर्गों से गुना है।
देखा-पढ़ा या सुना है, उससे इतना ही जाना है।
ईश्वर के बारे में, बस इतना माना है।
कि तुम भी ईश्वर हो, ये भी ईश्वर हैं।
मैं भी ईश्वर हूँ, यानी।
<u>हम सब के सब ईश्वर हैं</u>, तो ऐसे रहें।
जैसे भाई-भाई रहते हैं, प्यार से।
एक-दूसरे को दलें नहीं, छलें नहीं,
क्योंकि तुम, ये और मैं।
यानी हम सब के सब ही तो ईश्वर हैं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

(3)

तरुणाई है नाम सिंधु की उठती लहरों के गर्जन का,
चट्टानों से टक्कर लेना लक्ष्य बने जिनके जीवन का।
विफल प्रयासों से भी दूना वेग भुजाओं में भर जाता,
जोड़ा करता जिनके गति से नव उत्साह निरंतर नाता।
पर्वत के विशाल शिखरों-सा यौवन उसका ही है अक्षय,
जिसके चरणों पर सागर के होते अनगिन ज्वार सदा लय।
अचल खड़े रहते तो ऊँचा, शीश उठाए तूफानों में,
सहनशीलता, दृढ़ता हँसती, जिनके यौवन के प्राणों में।
वही पंथ-बाधा को तोड़ते बहते हैं जैसे हों निर्झर,
प्रगति नाम को सार्थक करता यौवन दुर्गमता पर चलकर
आज देश की भावी आशा बनी तुम्हारी ही तरुणाई
नए जन्म की श्वास तुम्हारे अंदर जगकर है लहराई।
आज विगत युग के पतझर पर तुमको है नव मधुमास खिलाना,
नवयुग के पृष्ठों पर तुमको, है नूतन इतिहास लिखाना
उठो राष्ट्र के नव यौवन तुम, दिशा-दिशा का सुन आमंत्रण,
जगो देश के प्राण, जगा दो नए प्रात का नया जागरण।
आज विश्व को यह दिखला दो, हममें भी जागी तरुणाई;
नई किरण की नई चेतना में हमने भी ली अँगड़ाई।।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।
(ख) रेखांकित शब्द का अर्थ लिखिए।
(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

(4)

दो न्याय अगर तो आधा दो
पर इसमें भी यदि बाधा हो।
तो दे दो केवल पाँच गाँव
रखो अपनी धरती तमाम।
हम वहीं खुशी से खाएँगे,
परिजन पर असि न उठाएँगे।
दुर्योधन वह भी दे न सका,
आशीष समाज की ले न सका
उलटे हरि को बाँधने चला।
जब नाश मनुज पर छाता है,
पहले विवेक मर जाता है।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उपयुक्त शीर्षक लिखिए।

(ख) रेखांकित पंक्ति का अर्थ बताइए।

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।

(5)

सच हम नहीं सच तुम नहीं
सच है महज संघर्ष ही।
संघर्ष से हटकर जिए तो क्या जिए हम या कि तुम।
जो नत हुआ वह मृत हुआ ज्यों वृंत से झर के कुसुम।
जो लक्ष्य भूल रुका नहीं।
जो हार देख झुका नहीं।
जिसने प्रणय पाथेय माना जीत उसकी ही रही।
सच हम नहीं सच तुम नहीं।
ऐसा करो जिससे न प्राणों में कहीं जड़ता रहे।
जो है जहाँ चुपचाप अपने-आप से लड़ता रहे।
जो भी परिस्थितियाँ मिलें।
काँटे चुभें, कलियाँ खिलें।
हारे नहीं इंसान, है संदेश जीवन का यही।
सच हम नहीं सच तुम नहीं।

प्रश्न—(क) प्रस्तुत काव्यांश का उचित शीर्षक लिखिए।

(ख) 'जो नत हुआ सो मृत हुआ'—पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।

(ग) उपर्युक्त काव्यांश की मूल संवेदना लिखिए।